RNI No. RAJHIN/2020/11458

वर्ष : 6 अंक : 8 अगस्त, 2026 मूल्य : 80 रु. पृष्ठ : 44

राजस्थान टुडे

इलाज बढ़ा, सेहत क्यों घटी?

7 **सवाल देश की सेहत का** थाली से अस्पताल तक... आखिर कहां हो रही चूक?

10 **बीमारी का बाजार** दवा का 'स्लो पॉइजन' निगल रहा जिंदगी

13 **जांच का जाल** स्वास्थ्य जांच के नाम पर कारोबार

16 **इलाज का चक्रव्यूह** जब स्वास्थ्य बन जाए कारोबार

19 **बीमा का सच** सुरक्षा का वादा, भरोसे की परीक्षा

24 **बीमार होता भरोसा** मरीज और डॉक्टर के रिश्ते का संकट

26 **रोकथाम की नीति** स्वस्थ नागरिक हो विकास की पहचान

30 YEARS
OF TRUST CARE
AND
EXCELLENCE
VASUNDHARA HOSPITAL
BRINGING COLORS TO LIFE
Since 1996
वसुंधरा
हॉस्पिटल
NABL
NABH
ACCREDITED
हर रिश्ता
भरोसे से बनता है,
और
हर भरोसा
वक्त के साथ मजबूत होता है।
" वसुंधरा हॉस्पिटल परिवार
अपने उन सभी मरीजों, समर्पित
स्टाफ और हर उस सदस्य का दिल
से धन्यवाद करता है जिन्होंने हमें
अपने जीवन का हिस्सा बनाया। "
धन्यवाद
• प्यार • विश्वास • प्रतिबद्धता
CCU 16 बेड
ICU 8 बेड
HDU 8 बेड
NICU 12 बेड
PICU 2 बेड
सबसे उन्नत कैथलैब | कार्डियक ओटी | एक्स-रे | आईसीयू एम्बुलेंस | सीटी स्कैन | 5 मोड्यूलर ओटी
मुख्यमंत्री आयुष्मान आरोग्य योजना
RGHS राज्य सरकार के कर्मचारियों एवं पेंशनर्स
निःशुल्क चिकित्सकीय ईलाज के लिए अधिकृत
CGHS (केन्द्र सरकार)
CAPF
ECHS (भूतपूर्व सैनिक)
भारतीय रेल कर्मचारी
वसुंधरा हॉस्पिटल
सेक्टर 11, नंदनवन, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड, जोधपुर - 342008, राजस्थान
Toll Free Number
0141-4940-493
24x7 CARDIAC CARE
0291-2709001/2
Disclaimer: Image Conceptually Generated by AI.

राजस्थान टुडे

आपकी पत्रिका, आपकी बात

www.rajasthantoday.online

RNI No. RAJHIN/2020/11458

वर्ष 6, अंक 8, अगस्त 2026

प्रधान सम्पादक - दिनेश रामावत

प्रबंध सम्पादक - राकेश गांधी

राजनीतिक सम्पादक - सुरेश व्यास

कार्यकारी सम्पादक - अजय अस्थाना

सह सम्पादक - बलवंत राज मेहता

विशेष प्रतिनिधि

नई दिल्ली - राधा रमण

जयपुर - मणिमाला शर्मा

उदयपुर - मधुलिका सिंह

कोटा - अरविन्द गुप्ता

बीकानेर- राकेश आचार्य

पाली - चैनराज भाटी

सिरोही - गणपत सिंह

जालोर - तरुण गहलोत

बाड़मेर - धर्मसिंह भाटी

रेखाचित्र- राजेंद्र यादव

विज्ञापन प्रतिनिधि

जोधपुर - प्रवीण गिरी - 99280 26609

संपादकीय कार्यालय

बी-4, फोर्थ फ्लोर, एम.आर. हाईट्स महावीर कॉलोनी, भास्कर सर्किल, रातानाड़ा, जोधपुर - 342 011

व्हाट्सएप नंबर - 81078 00000

ईमेल - rajasthantoday@gmail.com

सभी विवादों का निपटारा जोधपुर की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों और फोरमों में किया जाएगा।

राजस्थान टुडे में प्रकाशित आलेख लेखकों की राय है। इसे राजस्थान टुडे की राय नहीं समझा जाए। राजस्थान टुडे के मुद्रक, प्रकाशक और प्रधान सम्पादक इसके लिए जिम्मेदार नहीं होंगे। हमारी भावना किसी वर्ग या व्यक्ति को आहत करना नहीं है। विज्ञापनदाताओं के किसी भी दावे का उत्तरदायित्व राजस्थान टुडे का नहीं होगा।

मारवाड़ मीडिया प्लस के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक पूनम अस्थाना द्वारा बी-4, फोर्थ फ्लोर, महावीर कॉलोनी, रातानाड़ा, जोधपुर-342 011 से प्रकाशित और डी.बी. कॉर्प लिमिटेड, 10 जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर में मुद्रित। संपादक : अजय अस्थाना*
(*पी आर पी एक्ट के तहत उत्तरदायी)

अंदर विशेष

4 अपनी बात
युवाओं की आवाज़ और सत्ता की जवाबदेही

नियमित कॉलम

29 बात बेलगाम
30 बोल हरि बोल
41 अभिव्यक्ति
42 ग्रहों की चाल

5 इलाज बढ़ा, सेहत क्यों घटी?

7 आखिर कहां हो रही है चूक?

10 दवा का 'स्लो पॉइज़न' निगल रहा...

13 जांच का जाल...
स्वास्थ्य जांच के नाम पर कारोबार

16 इलाज का चक्रव्यूह...
जब स्वास्थ्य बन जाए कारोबार

19 बीमा का सच...
सुरक्षा का वादा, भरोसे की परीक्षा

24 बीमार होता भरोसा...
मरीज और डॉक्टर के रिश्ते का संकट

26 रोकथाम की नीति...
स्वस्थ नागरिक हों विकास की पहचान

27 विज्ञान संग आयुर्वेद...
परम्परा से मेडिकल टूरिज्म तक

32 राजनीति...
भाजपा में ये क्या हो रहा है...?

35 अयोध्या राममंदिर प्रकरण...
फुनगी को फांसी... शाखाओं को माफी

38 फीफा विश्व कप 2026
युवा जोश की ताजपोशी

40 जीवन प्रबंधन...
कॉपीकैट नहीं, विवेकशील बनें

अपनी बात

युवाओं की आवाज़ और सत्ता की जवाबदेही

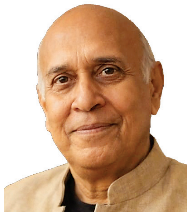

दिनेश रामावत
प्रधान सम्पादक

जेन-ज़ी के नेतृत्व में उभरे युवा आंदोलन और शिक्षा मंत्री के इस्तीफे ने भारतीय लोकतंत्र में जवाबदेही की प्रासंगिकता को फिर रेखांकित किया है। अब चुनौती केवल राजनीतिक निर्णय नहीं, बल्कि शिक्षा व्यवस्था में पारदर्शिता, संस्थागत सुधार और युवाओं के भरोसे को स्थायी रूप से मजबूत करने की है।

भारतीय लोकतंत्र में कुछ घटनाएं अपने तात्कालिक राजनीतिक प्रभाव से कहीं अधिक गहरे संदेश छोड़ जाती हैं। केंद्रीय शिक्षा मंत्री धर्मेंद्र प्रधान का इस्तीफा ऐसी ही एक घटना है। इसे केवल एक मंत्री का पद छोड़ना मानना पर्याप्त नहीं होगा। यह उस बदलते भारत का संकेत है, जहां चुनावी बहुमत जितना महत्वपूर्ण है, उतनी ही महत्वपूर्ण जनता के प्रति जवाबदेही भी है।

लंबे समय से यह धारणा बनाई जाती रही कि भारत की नई पीढ़ी राजनीति से दूर है। कहा गया कि उसके लिए लोकतंत्र से अधिक सोशल मीडिया मायने रखता है और सार्वजनिक जीवन से अधिक व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाएं। लेकिन हाल के युवा आंदोलन ने इस सोच को चुनौती दी है। प्रतियोगी परीक्षाओं में पारदर्शिता, पेपर लीक और शिक्षा व्यवस्था में जवाबदेही की मांग को लेकर जिस तरह देशभर के युवाओं ने शांतिपूर्ण और संगठित तरीके से अपनी आवाज़ उठाई, उसने यह स्पष्ट कर दिया कि जेन-ज़ी उदासीन नहीं, बल्कि अपने भविष्य को लेकर बेहद सजग है।

इस आंदोलन की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि इसका केंद्र कोई राजनीतिक दल नहीं था। इसकी ताकत उन लाखों युवाओं की आकांक्षाओं से निकली, जिनके लिए एक निष्पक्ष परीक्षा केवल नौकरी का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और समान अवसर का प्रतीक है। जब उन्हें लगा कि व्यवस्था उनके भरोसे पर खरी नहीं उतर रही, तब उन्होंने लोकतांत्रिक ढंग से अपनी असहमति दर्ज कराई। अंततः सरकार को शिक्षा मंत्री का इस्तीफा स्वीकार करना पड़ा। यह निर्णय चाहे राजनीतिक विवशता रहा हो या नैतिक जिम्मेदारी, लेकिन इसका संदेश स्पष्ट है कि लोकतंत्र में जनता की आवाज़ को हमेशा अनदेखा नहीं किया जा सकता।

हालांकि, यह भी उतना ही सच है कि किसी मंत्री का इस्तीफा अपने आप में समाधान नहीं होता। इससे न तो पेपर लीक रुक जाएंगे और न ही परीक्षा प्रणाली स्वतः पारदर्शी हो जाएगी। असली परीक्षा अब सरकार के सामने है। यदि यह घटनाक्रम व्यापक शिक्षा सुधार, परीक्षा सुरक्षा, तकनीकी पारदर्शिता और संस्थागत जवाबदेही की दिशा में ठोस कदमों का कारण बनता है, तभी इसका वास्तविक महत्व सिद्ध होगा। अन्यथा यह केवल एक प्रतीकात्मक राजनीतिक घटना बनकर रह जाएगा।

यह घटनाक्रम विपक्ष के लिए भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। विडंबना यह रही कि जिस आंदोलन ने पूरे देश का ध्यान खींचा, उसमें विपक्ष निर्णायक भूमिका निभाता दिखाई नहीं दिया। यह युवा आंदोलन किसी राजनीतिक दल के नेतृत्व में नहीं, बल्कि नागरिक समाज की स्वाभाविक अभिव्यक्ति के रूप में सामने आया। इससे यह संकेत मिलता है कि नई पीढ़ी अब पारंपरिक राजनीतिक ढांचों पर पूरी तरह निर्भर नहीं है। वह स्वयं संगठित होकर लोकतांत्रिक दबाव बनाने की क्षमता रखती है।

राजनीतिक दलों के लिए यह एक गंभीर संदेश है। लंबे समय तक युवाओं को केवल चुनावी गणित का हिस्सा माना गया। लेकिन आज का युवा जातीय और वैचारिक नारों से आगे बढ़कर अवसर, पारदर्शिता और संस्थागत ईमानदारी की बात कर रहा है। उसके लिए रोजगार, शिक्षा और निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा राजनीतिक बहस के केंद्रीय विषय हैं। जो दल इन आकांक्षाओं को समझेंगे, वही भविष्य की राजनीति को दिशा देंगे।

सरकार के लिए भी यह आत्ममंथन का अवसर है। मजबूत बहुमत शासन को स्थिरता देता है, लेकिन लोकतांत्रिक वैधता केवल चुनावी जीत से नहीं, बल्कि निरंतर जनविश्वास से मिलती है। किसी भी लोकतंत्र की शक्ति इस बात में होती है कि वह असंतोष को दमन से नहीं, संवाद और सुधार से संबोधित करे। यदि सरकार इस संदेश को समझते हुए शिक्षा व्यवस्था में संरचनात्मक बदलाव करती है, तो यह निर्णय दूरगामी प्रभाव छोड़ सकता है।

संसद का मानसून सत्र भी ऐसे समय हो रहा है, जब इन सवालों की अनदेखी संभव नहीं है। संसद का दायित्व केवल कानून बनाना नहीं, बल्कि उन नागरिकों के विश्वास को मजबूत करना भी है, जिन्होंने लोकतांत्रिक प्रक्रिया में आस्था दिखाई है। शिक्षा, रोजगार और संस्थागत विश्वसनीयता अब केवल नीतिगत विषय नहीं रहे; वे लोकतांत्रिक भरोसे के प्रश्न बन चुके हैं।

इस पूरे घटनाक्रम की सबसे बड़ी उपलब्धि शायद किसी मंत्री का इस्तीफा नहीं है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि लाखों युवाओं ने महसूस किया कि लोकतंत्र में उनकी आवाज़ अब भी असर पैदा कर सकती है। यह विश्वास किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की सबसे बड़ी पूंजी होता है। जब नागरिक यह मानते हैं कि शांतिपूर्ण और संवैधानिक तरीके से बदलाव संभव है, तभी लोकतंत्र मजबूत होता है।

जेन-ज़ी ने भारतीय राजनीति को एक स्पष्ट संदेश दिया है। नई पीढ़ी चमत्कार नहीं मांग रही, वह केवल निष्पक्षता, जवाबदेही और सम्मान चाहती है। अब यह सरकार, विपक्ष और संस्थाओं सभी की जिम्मेदारी है कि वे इस संदेश को केवल एक क्षणिक राजनीतिक घटना न मानें, बल्कि लोकतांत्रिक सुधार के अवसर के रूप में देखें। यदि ऐसा हुआ, तो धर्मेंद्र प्रधान का इस्तीफा केवल एक राजनीतिक निर्णय नहीं, बल्कि भारतीय लोकतंत्र में जवाबदेही के एक नए अध्याय की शुरुआत माना जाएगा।

इलाज बढ़ा, सेहत क्यों घटी?

इस विशेषांक की कवर स्टोरी भारत की स्वास्थ्य व्यवस्था के उन पहलुओं की पड़ताल करती है, जहां बीमारी की शुरुआत से लेकर इलाज तक कई गंभीर सवाल खड़े होते हैं। भोजन की गुणवत्ता, दवाओं और जांच के बढ़ते कारोबार, इलाज के व्यावसायीकरण, मरीज-डॉक्टर के बीच घटते भरोसे और रोकथाम आधारित स्वास्थ्य नीति की जरूरत पर यह श्रृंखला तथ्यपरक और विश्लेषणात्मक दृष्टि से विमर्श प्रस्तुत करती है। उद्देश्य किसी को कटघरे में खड़ा करना नहीं, बल्कि स्वस्थ समाज के निर्माण पर सार्थक बहस शुरू करना है।

हमारे समय का सबसे बड़ा विरोधाभास शायद यही है कि चिकित्सा विज्ञान जितनी तेजी से आगे बढ़ रहा है, समाज उतनी ही तेजी से बीमार होता जा रहा है। अस्पताल बढ़ रहे हैं, दवाओं का बाजार फैल रहा है और स्वास्थ्य बीमा का दायरा भी बढ़ रहा है। लेकिन साथ ही मधुमेह, कैंसर, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप, मोटापा, किडनी और मानसिक रोग जैसी बीमारियां भी लगातार बढ़ रही हैं। सवाल यह है कि अगर स्वास्थ्य सेवाएं इतनी विकसित हो रही हैं, तो आखिर हमारी सेहत बिगड़ क्यों रही है?

हमारा उद्देश्य किसी व्यक्ति, संस्था या पेशे को कटघरे में खड़ा करना नहीं, बल्कि उन मुद्दों पर गंभीर चर्चा करना है, जिन पर अक्सर शोर अधिक और संवाद कम होता है। हमारी पड़ताल की शुरुआत थाली से होती है। क्योंकि हर बीमारी की कहानी अस्पताल से नहीं, जीवनशैली और भोजन से शुरू होती है। आज हमारी थाली में स्वाद बढ़ा है, लेकिन क्या पोषण भी? मिलावट, रासायनिक अवशेष, अल्ट्रा प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थ, शर्करा युक्त पेय और बदलती खानपान की आदतों ने सार्वजनिक स्वास्थ्य के सामने नई चुनौतियां खड़ी कर दी हैं।

बीमारियां बढ़ती हैं तो दवाओं की जरूरत भी बढ़ती है। भारत दुनिया की फार्मेसी कहलाता है। यह गर्व की बात है, लेकिन दवाओं के बढ़ते बाजार के साथ कई सवाल भी जुड़े हैं। क्या हर दवा जरूरी है? क्या एंटीबायोटिक का अंधाधुंध उपयोग भविष्य का बड़ा संकट नहीं बन रहा? क्या नकली और निम्न गुणवत्ता वाली दवाओं पर हमारी निगरानी पर्याप्त है? ये प्रश्न इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि दवा जीवन बचाने का माध्यम है, केवल व्यापार का साधन नहीं। इसी तरह जांच आधुनिक चिकित्सा की आवश्यकता है। लेकिन जब जांच चिकित्सा आवश्यकता से आगे बढ़कर कारोबार का रूप लेने लगे, तब मरीज के मन में संदेह होना स्वाभाविक है। हर चिकित्सक या जांच केंद्र पर प्रश्नचिह्न लगाना उचित नहीं, फिर भी अनावश्यक जांच, रेफरल और कमीशन जैसे मुद्दों ने पूरे तंत्र की विश्वसनीयता को प्रभावित किया है।

हमें विश्वास है कि यह विशेषांक पाठकों को जानकारी के साथ सोचने के लिए भी प्रेरित करेगा। क्योंकि जब सवाल देश की सेहत का हो, तब मौन सबसे बड़ा जोखिम होता है।

आज चिकित्सा केवल सेवा नहीं, बल्कि एक बड़ा उद्योग भी बन चुकी है। निजी क्षेत्र ने स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार किया है, लेकिन जब लाभ और सेवा के बीच संतुलन बिगड़ता है, तब सबसे अधिक नुकसान मरीज का होता है। क्या हमारी स्वास्थ्य व्यवस्था का केंद्र बीमारी का इलाज है या नागरिक का स्वास्थ्य?

इन सबके बीच सबसे अधिक चोट भरोसे को पहुंची है। डॉक्टर और मरीज का रिश्ता केवल पेशेवर नहीं था, उसमें विश्वास और संवेदना भी शामिल थी। आज मरीज को लगता है कि कहीं उससे अनावश्यक खर्च तो नहीं कराया जा रहा, जबकि डॉक्टर बढ़ते दबाव, हिंसा, मुकदमों और कॉरपोरेट अपेक्षाओं के बीच काम कर रहे हैं। यह किसी एक पक्ष की विफलता नहीं, बल्कि उस व्यवस्था का परिणाम है, जिसमें संवाद कम और संदेह अधिक हो गया है।

किसी भी देश की स्वास्थ्य व्यवस्था की सफलता इस बात से नहीं मापी जानी चाहिए कि उसने कितने अस्पताल बनाए, बल्कि इस बात से कि उसके नागरिक कितने स्वस्थ हैं। यदि हमारी नीतियों का केंद्र इलाज नहीं, बल्कि बीमारी की रोकथाम बने, यदि बच्चों को स्वस्थ भोजन और सक्रिय जीवनशैली की शिक्षा मिले, यदि मिलावट पर कठोर कार्रवाई हो तथा दवा, जांच और इलाज के हर स्तर पर पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित हो, तभी हम वास्तव में स्वस्थ भारत की दिशा में आगे बढ़ सकेंगे।

यह कवर स्टोरी किसी निष्कर्ष की घोषणा नहीं, बल्कि एक बहस की शुरुआत है। स्वास्थ्य केवल डॉक्टरों, अस्पतालों या सरकार का विषय नहीं, बल्कि हमारी थाली, हमारी आदतों, हमारी नीतियों, हमारे बाजार और हमारी सामूहिक जिम्मेदारी का प्रश्न है।

प्रतिभा, परिश्रम और सेवा का प्रेरक चेहरा-

डॉ. राजेंद्र भाटी

सपनों को दिया संकल्प का सहारा

कहते हैं कि बड़े सपनों की कोई सीमा नहीं होती। यदि लक्ष्य स्पष्ट हो और मेहनत निरंतर, तो साधारण शुरुआत भी असाधारण मंज़िल तक पहुँचा सकती है। डॉ. राजेंद्र भाटी का जीवन इसी सत्य का जीवंत उदाहरण है। राजस्थान के जैतारण के एक सरकारी विद्यालय से शुरू हुई उनकी शिक्षा आज उन्हें देश के प्रतिष्ठित गैस्ट्रोएंटेरोलॉजिस्ट एवं हेपेटोलॉजिस्ट के रूप में स्थापित कर चुकी है।

मेहनत ने दिलाई राष्ट्रीय पहचान

सरकारी विद्यालय से प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद उन्होंने मेडिकल प्रवेश परीक्षा की तैयारी के लिए कोटा का रुख किया। कठिन प्रतिस्पर्धा के बीच उनकी प्रतिभा चमकी और उन्होंने RPMT में ऑल राजस्थान 685वीं तथा AIPMT में ऑल इंडिया 1472वीं रैंक हासिल की। इसके बाद गुजरात के पंडित दीनदयाल उपाध्याय मेडिकल कॉलेज, राजकोट से एमबीबीएस की पढ़ाई पूरी कर उन्होंने चिकित्सा क्षेत्र में अपने सुनहरे भविष्य की मजबूत नींव रखी।

निरंतर सीखने का जुनून

डॉ. भाटी ने सफलता को कभी अंतिम पड़ाव नहीं माना। उन्होंने NEET-PG में ऑल इंडिया 1614वीं रैंक प्राप्त कर पीबीएम हॉस्पिटल, बीकानेर से मेडिसिन में एमडी (गोल्ड मेडलिस्ट) किया। एम्स जोधपुर में सीनियर रेजिडेंट के रूप में सेवाएं दी। NEET SS में 68वीं रैंक प्राप्त की। इसके बाद एस.एन. मेडिकल कॉलेज, जोधपुर से डीएम (गैस्ट्रोएंटेरोलॉजी) की सुपर स्पेशलिटी डिग्री प्राप्त की। इसके बाद गुरुग्राम के आर्यवृत हॉस्पिटल से फेलोशिप (एडवांस जीआई एंडोस्कोपी) की। खुद को अनुभवी व प्रतिष्ठित डॉक्टर के रूप में स्थापित किया।

चिकित्सा नहीं, सेवा का संकल्प

डॉ. राजेंद्र भाटी चिकित्सा को केवल पेशा नहीं, बल्कि समाज सेवा का माध्यम मानते हैं। एम्स जोधपुर में असिस्टेंट प्रोफेसर के रूप में सेवाएँ देने के बाद वे वर्तमान में मेडीपल्स हॉस्पिटल, जोधपुर में वरिष्ठ गैस्ट्रोएंटेरोलॉजी विशेषज्ञ के रूप में कार्यरत हैं। साथ ही पाल रोड स्थित अतुल्य सुपर स्पेशलिटी क्लिनिक में मरीजों को परामर्श और उपचार प्रदान कर रहे हैं। उनकी संवेदनशीलता, सहज व्यवहार और मरीजों को सरल भाषा में बीमारी समझाने की शैली उन्हें विशेष बनाती है।

कोविड काल में निभाया मानवता का धर्म

कोरोना के कठिन समय में जब पूरा देश अभूतपूर्व संकट से गुजर रहा था, तब डॉ. भाटी ने अग्रिम पंक्ति में रहकर हजारों मरीजों की सेवा की। चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में भी उन्होंने अपने कर्तव्य को सर्वोच्च प्राथमिकता दी। उनके इस समर्पण और मानव सेवा के लिए विभिन्न सामाजिक संस्थाओं ने उन्हें सम्मानित किया।

नई पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत

डॉ. राजेंद्र भाटी का जीवन उन लाखों विद्यार्थियों के लिए प्रेरणा है जो सरकारी विद्यालयों में पढ़ते हुए बड़े सपने देखते हैं। उनकी सफलता यह संदेश देती है कि परिस्थितियाँ नहीं, बल्कि दृढ़ संकल्प, सतत परिश्रम और सेवा की भावना व्यक्ति को शिखर तक पहुँचाती है।

Gastro & Liver Specialist
MD, DM (Gastroenterology)
Fellow in Advanced GI Endoscopy
Ex. Assistant Professor, AIIMS, Jodhpur

समाज के प्रति संवेदनशील प्रतिबद्धता

व्यस्त चिकित्सा जीवन के बावजूद डॉ. भाटी नियमित रूप से निःशुल्क चिकित्सा शिविरों में भाग लेते हैं और आर्थिक रूप से कमजोर मरीजों को बेहतर उपचार उपलब्ध कराने का प्रयास करते हैं। उनके लिए हर मरीज केवल एक रोगी नहीं, बल्कि एक परिवार की उम्मीद होता है। यही मानवीय दृष्टिकोण उन्हें समाज में विशेष सम्मान दिलाता है।

आज डॉ. राजेंद्र भाटी केवल एक सफल गैस्ट्रोएंटेरोलॉजिस्ट नहीं, बल्कि सादगी, संवेदनशीलता और समर्पित चिकित्सा सेवा के प्रतीक हैं। उनकी जीवन-यात्रा यह विश्वास जगाती है कि जब उद्देश्य समाज की सेवा हो, तो सफलता स्वयं कदम चूमती है।

थाली से अस्पताल तक...
आखिर कहां हो रही है चूक?

राकेश गांधी,
वरिष्ठ पत्रकार

हम जो खा रहे हैं, क्या वही धीरे-धीरे हमें बीमार भी बना रहा है? मिलावटी खाद्य पदार्थ, रसायनों का बढ़ता उपयोग, अल्ट्रा-प्रोसेस्ड फूड, शर्करा युक्त पेय और बदलती खानपान की आदतों के बीच यह सवाल पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हो गया है। क्या बढ़ती बीमारियों की शुरुआत हमारी रसोई और बाजार से हो रही है? यह विशेष पड़ताल इसी कड़वी सच्चाई की परतें खोलने का प्रयास है।

कल्पना कीजिए...
सुबह एक बच्चा उठता है। मां प्यार से उसके हाथ में पैकेट वाला जूस थमा देती है। स्कूल जाते समय उसके बैग में चिप्स और बिस्कुट रख दिए जाते हैं। दोपहर में भूख लगती है तो बाजार का तैयार भोजन मिल जाता है। शाम को दोस्तों के साथ शीतल पेय और तले हुए स्नैक्स, फिर रात को जल्दी बनने वाला पैकेटबंद भोजन।

माता-पिता को लगता है कि बच्चा भरपेट खा रहा है। लेकिन क्या सचमुच वह पौष्टिक भोजन कर रहा है, या धीरे-धीरे अपने शरीर में बीमारियों की नींव रख रहा है?

यह केवल एक बच्चे की कहानी नहीं, बल्कि आज करोड़ों भारतीय परिवारों की बदलती जीवनशैली का चित्र है।

इसी बीच लगभग हर सप्ताह देश के किसी-न-किसी हिस्से से खाद्य पदार्थों में मिलावट की खबरें सामने आती हैं। कहीं हजारों लीटर मिलावटी दूध पकड़ा जाता है, कहीं नकली घी बनाने वाली फैक्ट्री का भंडाफोड़ होता है, कहीं मसालों में मिलावट मिलती है, तो कहीं मिठाइयों और खाद्य तेलों के नमूने जांच में फेल हो जाते हैं। त्योहारों और बड़े आयोजनों के दौरान ऐसी खबरें और बढ़ जाती हैं।

दूसरी ओर अस्पतालों में कैंसर, हृदय रोग, मधुमेह, मोटापा, फैटी लिवर और पाचन संबंधी बीमारियों के मरीजों की संख्या लगातार बढ़ रही है।

क्या इन दोनों तस्वीरों का आपस में कोई संबंध है?

ये वे सवाल हैं जिन्हें हम लंबे समय से टालते आए हैं। क्योंकि यदि भोजन ही सुरक्षित नहीं रहेगा तो आधुनिक अस्पताल और महंगी दवाइयां भी समाज को पूरी तरह स्वस्थ नहीं बना पाएंगी।

जब बाजार रसोई से बड़ा हो गया

कुछ दशक पहले तक भारतीय थाली की पहचान मोटे अनाज, दाल, मौसमी सब्जियों, छाछ, ताजा भोजन और घर की रसोई से होती थी। आज उसकी जगह तेजी से पैकेटबंद खाद्य पदार्थ, अत्यधिक चीनी, नमक और वसा वाले उत्पाद, इंस्टेंट भोजन तथा अल्ट्रा-प्रोसेस्ड फूड लेते जा रहे हैं। सुविधा ने स्वाद तो बढ़ाया है, लेकिन क्या उसने स्वास्थ्य भी बेहतर किया है? यह ऐसा सवाल है, जिस पर गंभीर चर्चा की आवश्यकता है।

स्वास्थ्य पर सीधा हमला है मिलावट

- समस्या केवल बदलती जीवनशैली की नहीं है। खाद्य मिलावट भी उतनी ही गंभीर चुनौती बन चुकी है। नकली दूध, सिंथेटिक घी, मिलावटी मसाले, कृत्रिम रंगों से चमकाई गई मिठाइयां, मिलावटी तेल और अन्य खाद्य पदार्थ समय-समय पर जांच एजेंसियों की कार्रवाई में सामने आते रहे हैं। हर बार कुछ दिनों तक चर्चा होती है, फिर मामला ठंडा पड़ जाता है।
- लेकिन सवाल यह है कि जो मिलावट पकड़ में आ जाती है, उसके अलावा कितना ऐसा खाद्य पदार्थ हमारे घरों तक पहुंच जाता होगा, जिसकी कभी जांच ही नहीं होती?
- यह केवल आर्थिक अपराध नहीं है। यदि कोई जानबूझकर ऐसा खाद्य पदार्थ बेचता है, जिससे लोगों का स्वास्थ्य प्रभावित हो सकता है, तो यह समाज के साथ गंभीर अन्याय है। मिलावट का नुकसान तुरंत दिखाई नहीं देता, लेकिन लंबे समय में यह अनेक गंभीर बीमारियों की जमीन तैयार कर सकता है।

खेत से थाली तक रसायनों का लंबा सफर

▪ खेती में रासायनिक कीटनाशकों और उर्वरकों के बढ़ते उपयोग पर भी संतुलित चर्चा जरूरी है। किसानों की अपनी मजबूरियां हैं। उन्हें अधिक उत्पादन चाहिए, फसल को कीटों से बचाना होता है और बाजार की प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। दूसरी ओर उपभोक्ता यह जानना चाहता है कि उसकी थाली तक पहुंचने वाले फल और सब्जियां कितनी सुरक्षित हैं।

▪ इसलिए समाधान केवल किसान को दोषी ठहराने में नहीं, बल्कि ऐसी कृषि व्यवस्था विकसित करने में है, जिसमें उत्पादन भी बना रहे और स्वास्थ्य भी सुरक्षित रहे।

पैकेट का स्वाद, सेहत पर भारी?

एक और बड़ी चुनौती है अल्ट्रा-प्रोसेस्ड फूड। रंग, स्वाद, सुगंध और लंबे समय तक सुरक्षित रखने के लिए तैयार किए गए ऐसे खाद्य पदार्थ बच्चों और युवाओं की पहली पसंद बनते जा रहे हैं। बाजार और विज्ञापन उनकी आकर्षक दुनिया गढ़ते हैं। नतीजा यह है कि फल और घर का बना नाश्ता पीछे छूटता जा रहा है, जबकि पैकेटबंद स्नैक्स और मीठे पेय तेजी से जगह बना रहे हैं।

आज अनेक चिकित्सक इस बात पर चिंता व्यक्त करते हैं कि कम उम्र में मोटापा, फैटी लिवर, प्री-डायबिटीज और अन्य जीवनशैली संबंधी समस्याएं पहले की तुलना में अधिक देखने को मिल रही हैं। इन समस्याओं के कई कारण हैं—भोजन, शारीरिक निष्क्रियता, तनाव और नींद की कमी। इसलिए किसी एक कारण को दोष देना उचित नहीं होगा, लेकिन भोजन की भूमिका को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

बच्चे सबसे आसान निशाने पर

सबसे अधिक चिंता बच्चों को लेकर है। जिस उम्र में उन्हें ताजा भोजन, दूध, दाल, फल और खेलकूद की जरूरत होती है, उस उम्र में वे मोबाइल, पैकेटबंद खाद्य पदार्थ और शीतल पेय के बीच बड़े हो रहे हैं। यदि यही प्रवृत्ति जारी रही तो आने वाले वर्षों में देश को गंभीर जनस्वास्थ्य चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है।

कानून हैं, लेकिन डर क्यों नहीं?

अब सवाल सरकार और व्यवस्था से भी जुड़ता है। भारत में खाद्य सुरक्षा के लिए कानून मौजूद हैं। समय-समय पर नमूने लिए जाते हैं, कार्रवाई होती है और दोषियों पर जुर्माना तथा अन्य दंड भी लगाए जाते हैं। लेकिन क्या यह व्यवस्था इतनी प्रभावी है कि मिलावट करने वालों में कानून का भय पैदा हो? क्या जांच की गति पर्याप्त है? क्या दोषियों को समय पर सजा मिलती है? क्या उपभोक्ता को यह जानकारी आसानी से उपलब्ध होती है कि वह जो खरीद रहा है, उसकी गुणवत्ता कैसी है?

इन प्रश्नों पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

यूरोप से सीख, भारत क्या कर सकता है?

दुनिया के कई देशों ने खाद्य सुरक्षा को केवल कानून का नहीं, बल्कि जनस्वास्थ्य का विषय माना है। कुछ यूरोपीय देशों में खाद्य लेबल अधिक स्पष्ट बनाए गए हैं, ट्रांस फैट पर कड़े नियंत्रण लागू किए गए हैं, बच्चों को लक्षित जंक फूड के विज्ञापनों पर प्रतिबंध या सीमाएं लगाई गई हैं और नियमित निगरानी पर विशेष जोर दिया गया है। भारत की परिस्थितियां अलग हैं, लेकिन इन अनुभवों से सीख अवश्य ली जा सकती है।

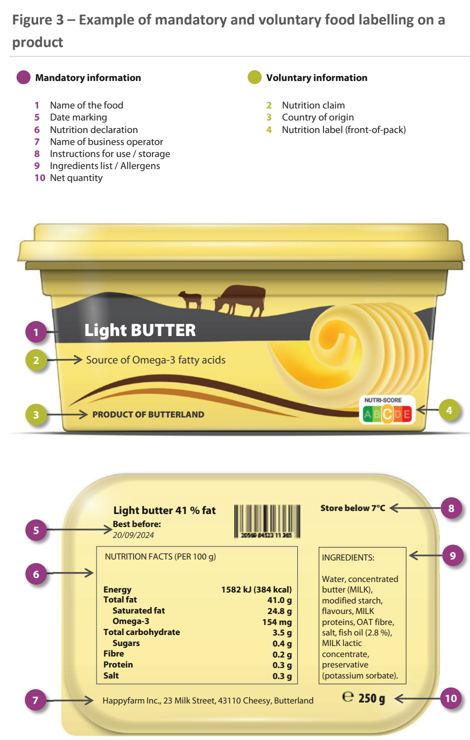

समाधान केवल सरकार के पास भी नहीं है। इसकी शुरुआत हमारे घर से होती है। यदि हम स्थानीय और ताजा भोजन को प्राथमिकता दें, बच्चों को पैकेट के बजाय रसोई से जोड़ें, खाद्य लेबल पढ़ने की आदत विकसित करें और मिलावट की शिकायतों को गंभीरता से दर्ज कराएं, तो स्थिति में बदलाव आ सकता है।

साथ ही सरकार को खाद्य जांच की क्षमता बढ़ानी होगी, मिलावट करने वालों के विरुद्ध त्वरित और कठोर कार्रवाई सुनिश्चित करनी होगी तथा स्कूलों में पोषण शिक्षा को प्रभावी ढंग से लागू करना होगा।

अब इलाज नहीं, बचाव की संस्कृति चाहिए

- स्वास्थ्य नीति का केंद्र केवल अस्पताल और इलाज नहीं, बल्कि स्वस्थ नागरिक होने चाहिए। किसी भी विकसित समाज की पहचान उसके अस्पतालों की संख्या से नहीं, बल्कि उसके नागरिकों के स्वास्थ्य से होती है।
- सच तो यह है कि हर बीमारी की शुरुआत अस्पताल से नहीं होती। उसकी शुरुआत अक्सर हमारी थाली से होती है।
- यदि थाली सुरक्षित होगी, तो दवा की जरूरत कम पड़ेगी। यदि भोजन शुद्ध होगा, तो अस्पतालों पर बोझ भी घटेगा।
- स्वस्थ भारत का सपना केवल नई चिकित्सा तकनीकों से पूरा नहीं होगा। उसकी शुरुआत खेत से होगी, बाजार से होगी, रसोई से होगी और हमारी रोजमर्रा की भोजन संबंधी आदतों से होगी।
- आखिरकार, सवाल सिर्फ इतना नहीं है कि हम क्या खा रहे हैं। असली सवाल यह है कि हम अपने बच्चों और आने वाली पीढ़ियों के लिए कैसी थाली छोड़कर जा रहे हैं।
- क्योंकि भारत का स्वास्थ्य अस्पतालों में नहीं, सबसे पहले उसकी थाली में तय होगा।

संघर्ष की मिट्टी से निकला... सेवा का एक उज्ज्वल सितारा

डॉ. सुभाष जोशी

(एंडोक्रिनोलॉजिस्ट & डायबिटोलॉजिस्ट)

DM (Endocrinology)

डायबिटीज़ • थायरॉइड • मोटापा एवं हार्मोन रोग विशेषज्ञ

> *"कुछ लोग डॉक्टर बनते हैं, और कुछ ऐसे होते हैं जिनकी वजह से 'डॉक्टर' शब्द का सम्मान और बढ़ जाता है। डॉ. सुभाष जोशी उन्हीं प्रेरणादायी व्यक्तित्वों में से एक हैं।"*

संघर्ष से सफलता तक का सफर

राजस्थान की धरती पर एक सरकारी स्कूल शिक्षक के परिवार में जन्मे डॉ. सुभाष जोशी ने बचपन से ही सीमित संसाधनों के बीच बड़े सपने देखे। राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, तखतगढ़ (पाली) से प्रारंभ हुई उनकी शिक्षा ने आगे चलकर चिकित्सा जगत में उल्लेखनीय उपलब्धियों का रूप लिया। उन्होंने सरदार पटेल मेडिकल कॉलेज बीकानेर से एमबीबीएस, *सवाई मानसिंह मेडिकल कॉलेज जयपुर* से एमडी (मेडिसिन), एम्स जोधपुर से सीनियर रेजिडेंसी तथा बनारस हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी से डीएम (एंडोक्रिनोलॉजी) की उपाधि प्राप्त की। NEET-SS में अखिल भारतीय 21वीं रैंक प्राप्त करना उनके परिश्रम और प्रतिभा का प्रमाण है।

सेवा ही सबसे बड़ा धर्म

डॉ. जोशी का मानना है कि उपचार केवल दवाइयों से नहीं, बल्कि संवेदनशील व्यवहार, विश्वास और मानवीय संवाद से भी होता है। यही कारण है कि उनके पास आने वाला प्रत्येक मरीज स्वयं को परिवार का सदस्य महसूस करता है। उनका जीवन मंत्र— 'मरीज पहले, बाकी सब बाद में' —उनकी चिकित्सा शैली की सबसे बड़ी पहचान है।

कोरोना काल के समर्पित योद्धा

कोविड-19 महामारी के कठिन समय में जब पूरा देश अभूतपूर्व संकट से जूझ रहा था, तब डॉ. सुभाष जोशी दिन-रात मरीजों की सेवा में जुटे रहे। उन्होंने केवल चिकित्सा ही नहीं की, बल्कि असंख्य परिवारों को आशा, साहस और विश्वास भी दिया।

अस्पताल से आगे समाज की सेवा

उनकी सेवा अस्पताल की चारदीवारी तक सीमित नहीं है। ग्रामीण क्षेत्रों में निःशुल्क स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन, आर्थिक रूप से कमजोर मरीजों की सहायता तथा जनस्वास्थ्य के प्रति जागरूकता फैलाना उनके सामाजिक दायित्व का महत्वपूर्ण हिस्सा है। वे दृढ़ता से मानते हैं कि 'स्वास्थ्य हर व्यक्ति का अधिकार है, सुविधा नहीं।'

ज्ञान और शोध के प्रति समर्पण

डॉ. जोशी चिकित्सा विज्ञान में निरंतर शोध और नवाचार के पक्षधर हैं। ऑस्टियोपोरोसिस, डायबिटिक फुट, कुशिंग सिंड्रोम तथा थायरॉइड विकारों पर उनके अध्ययन उल्लेखनीय हैं। उनका सपना भारत में टाइप-1 डायबिटीज़ के मरीजों के लिए ऐसी शोध-आधारित चिकित्सा विकसित करने का है, जिससे आने वाली पीढ़ियों का जीवन अधिक सुरक्षित और बेहतर बन सके।

सरल व्यक्तित्व, मजबूत परिवार

व्यस्त चिकित्सकीय जीवन के बावजूद वे क्रिकेट और बैडमिंटन के शौकीन हैं। उनका विश्वास है कि स्वस्थ शरीर, सकारात्मक सोच और अनुशासित जीवन सफलता की मजबूत नींव हैं।

डॉ. सुभाष जोशी अपनी सफलता का श्रेय अपने माता-पिता के आशीर्वाद, भाई डॉ. हितेश जोशी एवं बहन सोनल के स्नेह, पत्नी श्रीमती दीपिका जोशी के अटूट विश्वास एवं सहयोग तथा पुत्र दिव्यांश जोशी के प्रेम और मुस्कान को देते हैं। यही उनका सबसे बड़ा संबल, प्रेरणा और जीवन की वास्तविक शक्ति हैं।

दवा का 'स्लो पॉइजन' निगल रहा जिंदगी

राजेश कसेरा,
वरिष्ठ पत्रकार

देश में बीमारियां तेजी से बढ़ रही हैं और दवाओं पर निर्भरता भी। यह रिपोर्ट बढ़ती रोगग्रस्तता, दवा बाजार, जेनेरिक दवाओं, नकली दवाओं और स्वस्थ जीवनशैली की अहमियत की गंभीर पड़ताल करती है।

दुनिया में मध्य अफ्रीकी गणराज्य ऐसा देश है, जहां लोग सबसे ज्यादा बीमार होते हैं। वहीं ताइवान और सिंगापुर के नागरिक सबसे सेहतमंद माने जाते हैं। स्वास्थ्य के मामले में ये दोनों देश पहले और दूसरे स्थान पर हैं, जबकि भारत 71वें पायदान पर है। भले वैश्विक रैंकिंग में भारत की स्थिति बहुत खराब न दिखे, लेकिन जमीनी हकीकत चिंता बढ़ाने वाली है। भारतीय पहले से ज्यादा बीमार हो रहे हैं और दवाओं पर उनकी निर्भरता लगातार बढ़ रही है। हाल में राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) की रिपोर्ट ने इसकी पुष्टि करते हुए बताया कि पिछले 30 वर्षों में देश में बीमारियों की दर लगभग दोगुनी हो गई है। आज हर 100 भारतीयों में 13 से 15 लोग किसी न किसी बीमारी से जूझ रहे हैं। सवाल यह है कि आखिर ऐसा क्यों हो रहा है और क्या दवाएं ही इसका एकमात्र समाधान हैं?

इसके पीछे बदलती जीवनशैली, शारीरिक निष्क्रियता, असंतुलित खान-पान, बढ़ता तनाव, जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और नशे की बढ़ती प्रवृत्ति जैसे कई कारण जिम्मेदार हैं। इसके साथ ही दवाओं, विशेषकर एंटीबायोटिक के इस्तेमाल में भी तेज वृद्धि हुई है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार, पिछले एक दशक में भारत में एंटीबायोटिक की खपत लगभग 70 प्रतिशत बढ़ी है। अमेरिका की प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी के एक शोध के मुताबिक, भारतीय औसतन हर साल 12 से 18 एंटीबायोटिक गोलियां लेते हैं। इनमें से लगभग 67 प्रतिशत लोग मामूली बीमारी होने पर भी डॉक्टर से सलाह लिए बिना मेडिकल स्टोर से दवा खरीदकर सेवन कर लेते हैं।

एक स्वास्थ्य रिपोर्ट के अनुसार, 12 से 15 करोड़ भारतीय अपने कुल घरेलू खर्च का 10 से 12 प्रतिशत स्वास्थ्य देखभाल पर खर्च करते हैं। वहीं पांच करोड़ से अधिक लोग ऐसे परिवारों में रहते हैं, जहां कुल खर्च का 25 प्रतिशत से अधिक हिस्सा इलाज और दवाओं पर चला जाता है। यही वजह है कि भारत का फार्मास्यूटिकल उद्योग उत्पादन के लिहाज से दुनिया में तीसरे और मूल्य के हिसाब से 11वें स्थान पर पहुंच चुका है। इस उद्योग में तीन हजार से अधिक कंपनियां और करीब 10,500 विनिर्माण इकाइयां काम कर रही हैं। भारत का घरेलू दवा बाजार 60 से 70 अरब डॉलर का है और अनुमान है कि 2030 तक यह बढ़कर 130 अरब डॉलर तक पहुंच जाएगा।

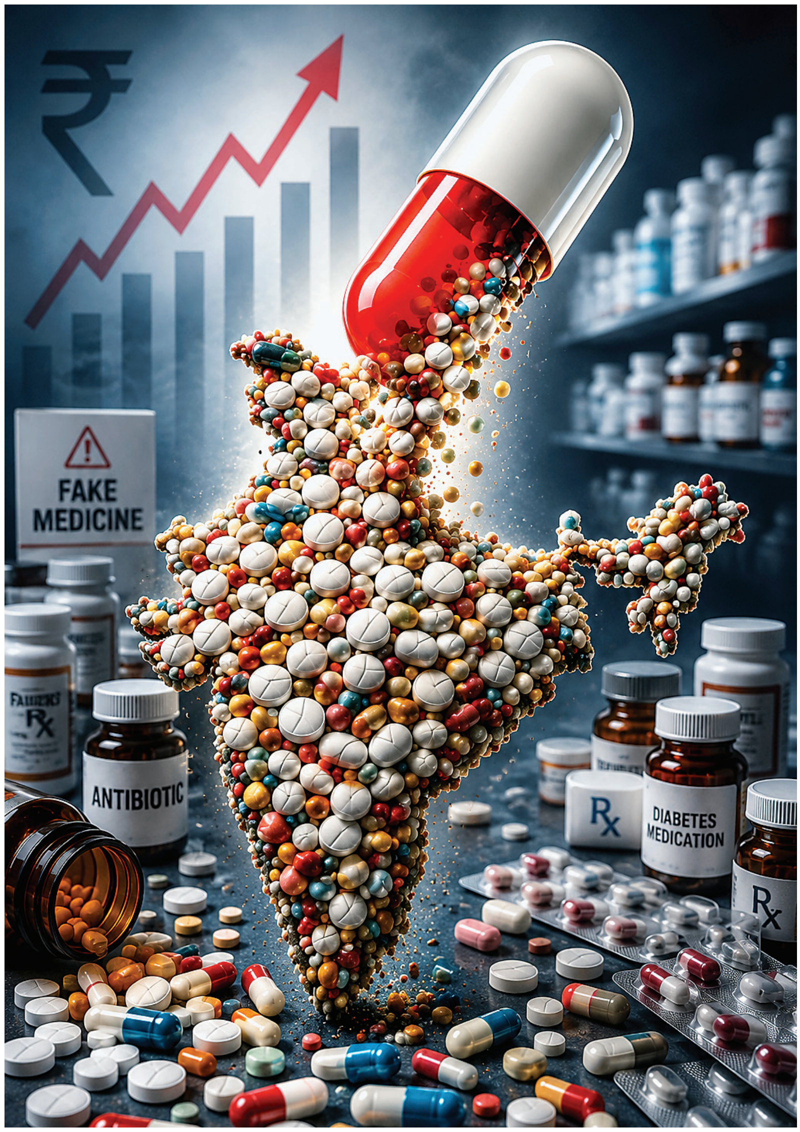

जेनेरिक और ब्रांडेड दवा : क्या है अंतर?

- ब्रांडेड और जेनेरिक दवाओं में सबसे बड़ा अंतर उनके नाम और कीमत का होता है। ब्रांडेड दवाएं बड़ी फार्मा कंपनियां विकसित करती हैं, जो शोध, परीक्षण और पेटेंट पर भारी निवेश करती हैं। इनके प्रचार-प्रसार पर भी काफी खर्च किया जाता है।
- जब किसी ब्रांडेड दवा का पेटेंट समाप्त हो जाता है, तब दूसरी कंपनियां उसी दवा को उसके मूल सॉल्ट के नाम से कम कीमत पर बाजार में उतारती हैं। इन्हें जेनेरिक दवाएं कहा जाता है। गुणवत्ता, सुरक्षा और प्रभाव के मामले में ये ब्रांडेड दवाओं के बराबर होती हैं। इनकी कीमत कम इसलिए होती है क्योंकि इनमें शोध और विज्ञापन का अतिरिक्त खर्च शामिल नहीं होता।
- यह धारणा गलत है कि जेनेरिक दवाएं कम असरदार होती हैं। भारत में केंद्रीय औषधि मानक नियंत्रण संगठन (सीडीएससीओ) और अमेरिका में एफडीए जैसी संस्थाएं इनकी गुणवत्ता की जांच करती हैं। सरकार भी आम लोगों तक सस्ती और प्रभावी दवाएं पहुंचाने के लिए जेनेरिक दवाओं को बढ़ावा दे रही है।

जेनेरिक दवाओं की सबसे बड़ी आपूर्ति भारत से

▪ वैश्विक जेनेरिक दवा आपूर्ति में भारत की हिस्सेदारी लगभग 20 प्रतिशत है। देश में 60 से अधिक चिकित्सीय श्रेणियों की दवाएं बनाई जाती हैं। मजबूत विनिर्माण क्षमता, विदेशी निवेश और सरकारी योजनाओं ने इस क्षेत्र को नई मजबूती दी है। गुणवत्ता नियंत्रण, सस्ती दवाओं की उपलब्धता और लगातार नवाचार के कारण भारत वैश्विक फार्मा बाजार में अपनी मजबूत पहचान बना चुका है। यूरोपीय संघ, ब्रिटेन और न्यूजीलैंड के साथ हाल में हुए व्यापार समझौते भी इस क्षेत्र को नई गति देने वाले माने जा रहे हैं।

तीन लाख करोड़ रुपये के पार पहुंचा दवा बाजार

▪ मई 2026 में 10.9 प्रतिशत की वृद्धि के साथ भारत का दवा बाजार तीन लाख करोड़ रुपये के आंकड़े को पार कर गया। डायबिटीज, हृदय रोग और वैक्सीन की बढ़ती मांग ने इस वृद्धि को गति दी।

▪ फामरैक की रिपोर्ट के अनुसार, हृदय रोगों की दवाओं का बाजार 14.5 प्रतिशत, डायबिटीज की दवाओं का 13.1 प्रतिशत और श्वसन रोगों की दवाओं की बिक्री 12.2 प्रतिशत बढ़ी। सबसे तेज वृद्धि वैक्सीन श्रेणी में दर्ज की गई, जहां बाजार 21.9 प्रतिशत बढ़ा। विशेषज्ञों का मानना है कि टीकाकरण और बीमारी की रोकथाम के प्रति बढ़ती जागरूकता इसकी प्रमुख वजह है।

इन दवा कंपनियों ने बढ़ाई हिस्सेदारी

▪ मई 2026 तक बाजार हिस्सेदारी के आधार पर सन फार्मा 8.4 प्रतिशत हिस्सेदारी के साथ पहले स्थान पर रही। इसके बाद एबॉट और सिप्ला का स्थान रहा, जिनकी हिस्सेदारी 5.9-5.9 प्रतिशत रही।

▪ वृद्धि दर के लिहाज से टोरेंट फार्मा 14.1 प्रतिशत की बढ़ोतरी के साथ सबसे आगे रही। इसके बाद इंटास (13.9 प्रतिशत), ग्लेनमार्क (13.4 प्रतिशत), सन फार्मा (12.9 प्रतिशत) और यूएसवी (12.7 प्रतिशत) रहे।

▪ वित्त वर्ष 2024-25 में भारत का दवा निर्यात 30.5 अरब डॉलर तक पहुंच गया, जो वर्ष 2000-01 के 1.9 अरब डॉलर की तुलना में लगभग 16 गुना अधिक है।

दुनिया के बच्चों तक पहुंच रही भारत की वैक्सीन

▪ देश में लगभग 500 कंपनियां सक्रिय औषधि संघटक (एपीआई) का उत्पादन करती हैं, जिनकी वैश्विक हिस्सेदारी लगभग 8 प्रतिशत है।

▪ भारत डिप्थीरिया, टिटनेस, काली खांसी (डीपीटी), बीसीजी और खसरा जैसी वैक्सीन की आपूर्ति में दुनिया के अग्रणी देशों में शामिल है। भारतीय कंपनियां यूनिसेफ को लगभग 60 प्रतिशत वैक्सीन उपलब्ध कराती हैं। इसके अलावा डीपीटी और बीसीजी वैक्सीन की वैश्विक मांग का 40 से 70 प्रतिशत तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन की खसरा वैक्सीन की मांग का लगभग 90 प्रतिशत भारत पूरा करता है।

▪ पिछले वित्तीय वर्ष में भारत ने दो लाख करोड़ रुपये से अधिक मूल्य की दवाओं का निर्यात किया। इनमें सबसे अधिक दवाएं अमेरिका, ब्रिटेन, दक्षिण अफ्रीका, नीदरलैंड और फ्रांस भेजी गईं।

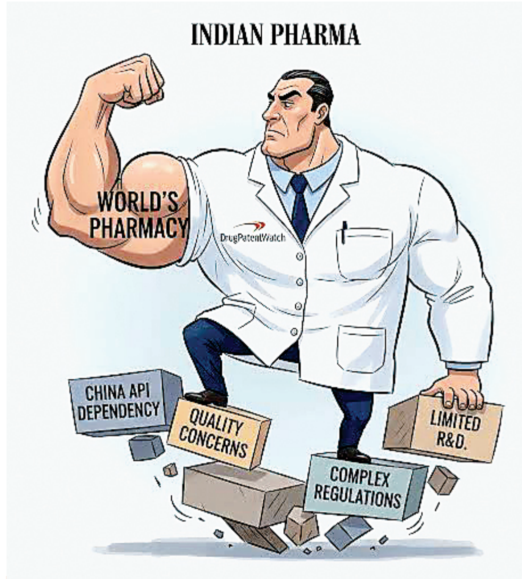

नकली दवाएं : बड़ा खतरा

▪ यदि डॉक्टर की बताई दवा सही मात्रा और समय पर लेने के बावजूद बीमारी में सुधार नहीं हो रहा है, तो उसके पीछे नकली या घटिया दवा भी एक कारण हो सकती है।

▪ कुछ रिपोर्टों में दावा किया गया है कि भारत में बिकने वाली हर चौथी दवा नकली या निम्न गुणवत्ता की हो सकती है। बुखार, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, दर्द निवारक और यहां तक कि कैंसर की दवाओं में भी नकली उत्पाद मिलने के मामले सामने आते रहे हैं।

▪ विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के अनुसार, नकली दवाओं का वैश्विक कारोबार लगभग 200 अरब डॉलर का है। इन दवाओं में अक्सर आवश्यक सॉल्ट या सक्रिय तत्व नहीं होते, जिससे मरीज को उपचार का लाभ नहीं मिलता और कई मामलों में जान तक जोखिम में पड़ जाती है।

▪ एसोचैम के एक अध्ययन में भी भारत में नकली और घटिया दवाओं की चुनौती को गंभीर बताया गया है।

महंगी दवाएं भी बढ़ा रही हैं बोझ

▪ भारत में मरीजों की सबसे बड़ी शिकायत दवाओं की कीमतों को लेकर है। एक ही सॉल्ट वाली दवा अलग-अलग ब्रांड नामों से कई गुना अलग कीमत पर बिकती है। जो दवा एक दुकान पर 15 रुपये में मिलती है, वही दूसरी जगह 40 रुपये तक में बिक सकती है। मरीज अक्सर डॉक्टर द्वारा लिखे गए ब्रांड को ही खरीदने के लिए मजबूर होता है।

▪ नई दवाओं या उन दवाओं की कीमत, जिन पर अभी सरकारी मूल्य नियंत्रण लागू नहीं हुआ है, कंपनियां अपनी मर्जी से तय कर सकती हैं। इसका सबसे अधिक असर डायबिटीज, हृदय रोग और अन्य दीर्घकालिक बीमारियों के मरीजों पर पड़ता है, जिनका मासिक दवा खर्च हजारों रुपये तक पहुंच जाता है।

▪ विशेषज्ञों के अनुसार, ब्रांडेड दवाओं पर फार्मासिस्ट को सामान्यतः 5 से 20 प्रतिशत तक मार्जिन मिलता है, जबकि कई जेनेरिक दवाओं में थोक और खुदरा कीमत के बीच कई गुना अंतर देखने को मिलता है।

▪ उदाहरण के तौर पर, पैरासिटामोल यदि उसके सॉल्ट के नाम से बेची जाए तो वह जेनेरिक दवा कहलाती है, जबकि किसी कंपनी के ब्रांड नाम से वही दवा ब्रांडेड दवा बन जाती है। सर्दी, खांसी, बुखार और बदन दर्द जैसी सामान्य समस्याओं के लिए जेनेरिक दवा कई बार 10 पैसे से डेढ़ रुपये प्रति टैबलेट तक उपलब्ध होती है, जबकि ब्रांडेड दवा की कीमत 35 रुपये प्रति टैबलेट तक पहुंच सकती है।

स्वस्थ जीवनशैली ही सबसे बड़ी दवा

स्वस्थ और खुशहाल जीवन के लिए केवल दवाइयों पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है। विशेषज्ञों के अनुसार अच्छे स्वास्थ्य के चार मजबूत आधार हैं—संतुलित भोजन, नियमित व्यायाम, पर्याप्त नींद और तनावमुक्त जीवन। भोजन का समय तय रखें और दिनभर का खाना 12 घंटे के भीतर लेने की आदत डालें। सप्ताह में दो दिन स्ट्रेंथ ट्रेनिंग जैसी हल्की कसरत मांसपेशियों को मजबूत बनाती है। रोज पर्याप्त नींद लें और कम से कम 20 मिनट धूप में जरूर बिताएं। सबसे जरूरी है कि हर दिन 15 मिनट केवल अपने लिए निकालें, तनाव कम करें और इस दौरान मोबाइल से दूरी बनाए रखें। आखिरकार, स्वस्थ जीवन की सबसे बड़ी दवा कोई गोली नहीं, बल्कि हमारी जीवनशैली है। छोटी-छोटी अच्छी आदतें ही लंबे समय तक बीमारी से बचाव और बेहतर स्वास्थ्य की सबसे मजबूत नींव बनती हैं।

साधारण परिवार से असाधारण उपलब्धि तक

मेहनत का प्रतिफल, सेवा का संकल्प : डॉ. भरत सेजू

जीवन में सफलता केवल प्रतिभा से नहीं, बल्कि संघर्ष, दृढ़ संकल्प और सेवा-भाव से प्राप्त होती है। डॉ. भरत सेजू का जीवन इसका सशक्त उदाहरण है। राजस्थान के जोधपुर शहर के सूरसागर की साधारण गलियों से निकलकर एम्स जोधपुर में असिस्टेंट प्रोफेसर बनने तक का उनका सफर हर उस युवा के लिए प्रेरणा है, जो सीमित संसाधनों के बावजूद बड़े सपने देखने का साहस रखता है।

संघर्षों ने गढ़ा व्यक्तित्व

12 जनवरी 1991 को जन्मे डॉ. भरत सेजू एक साधारण एवं मेहनतकश परिवार से आते हैं। परिवार में माता-पिता, एक बड़े भाई और पाँच बड़ी बहनें हैं। उनके पिता ने वर्षों तक पत्थर की खदानों में मजदूरी कर परिवार का पालन-पोषण किया। वर्ष 2014 में हृदयाघात एवं सिलिकोसिस जैसी गंभीर बीमारी के कारण उन्हें कार्य छोड़ना पड़ा। उनकी माता एक गृहिणी हैं, जिन्होंने अभावों के बीच भी बच्चों को शिक्षा, संस्कार और आत्मविश्वास की अमूल्य पूंजी दी। उनके बड़े भाई वर्तमान में बाड़मेर में शिक्षक के पद पर कार्यरत हैं।

आर्थिक परिस्थितियाँ चुनौतीपूर्ण थीं, लेकिन परिवार ने कभी उनके सपनों को छोटा नहीं होने दिया। शिक्षा ऋण लेकर उन्हें कोटा भेजा गया, जहाँ उन्होंने मेडिकल प्रवेश परीक्षा की तैयारी की। कठिन परिश्रम और दृढ़ संकल्प का परिणाम यह रहा कि वर्ष 2009 में गुजरात के राजकोट स्थित सरकारी मेडिकल कॉलेज में एमबीबीएस के लिए उनका चयन हुआ।

ज्ञान के साथ सेवा का संकल्प

एमबीबीएस के बाद उन्होंने लगभग छह माह तक एम्स जोधपुर में जूनियर रेजिडेंट के रूप में कार्य किया। इसके पश्चात वर्ष 2016 से 2019 तक एसएमएस मेडिकल कॉलेज, जयपुर से जनरल मेडिसिन में एमडी की उपाधि प्राप्त की। एमडी पूर्ण करने के बाद उन्होंने पुनः एम्स जोधपुर में सीनियर रेजिडेंट के रूप में सेवाएँ दीं।

एम्स जोधपुर में नई जिम्मेदारी

वर्ष 2026 में डॉ. भरत सेजू का चयन एम्स जोधपुर में असिस्टेंट प्रोफेसर के पद पर हुआ। यह उपलब्धि वर्षों की अथक मेहनत, उत्कृष्ट कार्य और सेवा-समर्पण का सम्मान है। इस नई भूमिका में वे मरीजों की चिकित्सा सेवा के साथ-साथ भावी चिकित्सकों के प्रशिक्षण तथा चिकित्सा अनुसंधान के माध्यम से समाज और देश की स्वास्थ्य सेवाओं को नई दिशा देने का कार्य कर रहे हैं।

पाली में बिताया गया समय उनके जीवन का एक महत्वपूर्ण अध्याय रहा। वहीं से मिले स्नेह और विश्वास को साथ लेकर उन्होंने भावनात्मक विदाई दी और नई जिम्मेदारियों के साथ एम्स जोधपुर में कार्यभार ग्रहण किया।

कोविड-19 महामारी में समर्पित सेवा

जब पूरा देश कोविड-19 महामारी जैसी अभूतपूर्व चुनौती का सामना कर रहा था, तब डॉ. भरत सेजू अग्रिम पंक्ति के कोरोना योद्धा बनकर तीनों लहरों में लगातार मरीजों की सेवा करते रहे। कठिन परिस्थितियों, लंबे कार्य-घंटों और संक्रमण के जोखिम के बावजूद उन्होंने अपने कर्तव्य का निर्वहन पूरी निष्ठा से किया।

पाली में जीता लोगों का विश्वास

मार्च 2022 में उन्होंने राजस्थान मेडिकल एजुकेशन सोसायटी (राजमेस) के अंतर्गत राजकीय मेडिकल कॉलेज, पाली के जनरल मेडिसिन विभाग में कार्यभार ग्रहण किया। यहाँ उन्हें स्वतंत्र रूप से चिकित्सा सेवा देने का अवसर मिला।

अपनी विशेषज्ञता, सरल स्वभाव और मरीज-केंद्रित दृष्टिकोण के कारण उन्होंने शीघ्र ही लोगों का विश्वास जीत लिया। उनकी व्यक्तिगत ओपीडी में प्रतिदिन औसतन लगभग 100 मरीज परामर्श के लिए पहुँचते थे। मरीजों का अटूट विश्वास, सम्मान और स्नेह ही उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि बन गया।

व्यस्त चिकित्सकीय दायित्वों के बावजूद वे प्रत्येक सप्ताहांत जोधपुर जाकर अपने परिवार के साथ समय बिताना नहीं भूलते थे। यह उनके पारिवारिक मूल्यों और जिम्मेदारियों के प्रति समर्पण का परिचायक है।

परिवार : सफलता की सबसे बड़ी ताकत

डॉ. भरत सेजू की सफलता के पीछे उनके परिवार का अमूल्य योगदान रहा है। उनकी धर्मपत्नी भी एक चिकित्सक हैं और वर्तमान में पाली में मेडिकल ऑफिसर के पद पर कार्यरत हैं। उनकी तीन वर्ष की पुत्री का विद्यालय में प्रवेश जोधपुर में कराया गया है। माता-पिता की चिकित्सकीय व्यस्तताओं के बीच उसका लालन-पालन दादा-दादी के स्नेह, संस्कार और संरक्षण में हो रहा है। यह संयुक्त परिवार की उस सुदृढ़ परंपरा का प्रतीक है।

प्रेरणा बनने वाली जीवन-यात्रा... डॉ. भरत सेजू का जीवन यह संदेश देता है कि अभाव कभी भी सफलता की राह में स्थायी बाधा नहीं बनते। ईमानदारी, कठिन परिश्रम, पारिवारिक संस्कार और सेवा की भावना व्यक्ति को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाती है।

स्वास्थ्य जांच के नाम पर कारोबार

बीमारी की सही पहचान के लिए जांच जरूरी है, लेकिन अनावश्यक टेस्ट, कमीशन की संस्कृति और मानकों की अनदेखी ने कई डायग्नोस्टिक सेंटरों की विश्वसनीयता पर सवाल खड़े कर दिए हैं।

ज्ञान चंद पाटनी,
वरिष्ठ पत्रकार

आज चिकित्सा विज्ञान ने बीमारी की पहचान को पहले से कहीं अधिक सटीक और आसान बना दिया है। आधुनिक जांच तकनीकों ने अनेक गंभीर रोगों का समय रहते पता लगाना संभव बनाया है। लेकिन इसी के साथ स्वास्थ्य जांच का एक ऐसा बाजार भी तेजी से विकसित हुआ है, जहां कई बार जरूरत से ज्यादा जांचें मरीज पर थोप दी जाती हैं। कहीं फुल बॉडी चेकअप के आकर्षक पैकेज हैं तो कहीं मामूली बीमारी में भी लंबी-चौड़ी जांच सूची। कुछ मामलों में जांच की गुणवत्ता और रिपोर्ट की विश्वसनीयता पर भी सवाल उठे हैं। ऐसे में यह समझना जरूरी हो जाता है कि जांचें इलाज का महत्वपूर्ण आधार हैं, लेकिन उनका उद्देश्य केवल बीमारी की सही पहचान होना चाहिए, न कि मरीज पर अनावश्यक आर्थिक बोझ डालना।

आजादी के बाद देश ने चिकित्सा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। स्वास्थ्य सेवाओं का नेटवर्क बढ़ा है, डॉक्टरों और नर्सिंगकर्मियों की संख्या में इजाफा हुआ है। बीमारी की जांच के लिए आधुनिक तकनीकों का व्यापक इस्तेमाल होने लगा है। लेकिन इस चमक के पीछे एक परेशान करने वाला सच भी छिपा है। कई जगह अनावश्यक जांचें कराई जा रही हैं, डायग्नोस्टिक सेंटर महज व्यावसायिक प्रतिष्ठान की तरह चल रहे हैं। कुछ मामलों में तो बिना नमूने की जांच किए ही रिपोर्ट तैयार करने की शिकायतें भी सामने आई हैं।

चिकित्सा से जुड़े हर व्यक्ति और संस्थान का मूल उद्देश्य मरीज की सेवा करना है, लेकिन लाभ का दबाव, कमीशन की संस्कृति और बढ़ती प्रतिस्पर्धा के कारण कई जगह प्राथमिकताएं बदल गई हैं। अनावश्यक जांचों को बढ़ावा देकर जांच-उद्योग खड़ा कर दिया गया है। कभी फुल बॉडी चेकअप के नाम पर, तो कभी छोटे-से संक्रमण में भी महंगी जांचें सामान्य होती जा रही हैं। कई बार सामान्य बीमारी में भी ऐसी जांचें लिख दी जाती हैं, जो इलाज बदलने में निर्णायक भूमिका नहीं निभातीं। इससे दोहरा नुकसान होता है। एक ओर मरीज की जेब पर अतिरिक्त बोझ पड़ता है, दूसरी ओर वास्तविक आवश्यक जांचों का महत्व कम हो जाता है।

यह समझना जरूरी है कि हर जांच का अपना वैज्ञानिक महत्व होता है। लेकिन जब जांच का चयन चिकित्सकीय आवश्यकता के बजाय आर्थिक लाभ के आधार पर होने लगे, तब समस्या गंभीर हो जाती है। अब तो कई मरीजों में भी यह धारणा बनने लगी है कि जितनी अधिक जांचें होंगी, इलाज उतना बेहतर होगा, जबकि बेहतर इलाज का अर्थ सही समय पर सही जांच है, न कि अधिक से अधिक जांचें।

स्वास्थ्य विशेषज्ञों का मानना है कि जांचें बीमारी की पहचान का माध्यम हैं, बीमारी पैदा करने का नहीं। इसलिए हर व्यक्ति को यह समझना चाहिए कि कौन-सी जांच कब जरूरी है, किसे डॉक्टर की सलाह के बिना नहीं कराना चाहिए और किन जांचों को नियमित अंतराल पर कराना लाभदायक हो सकता है।

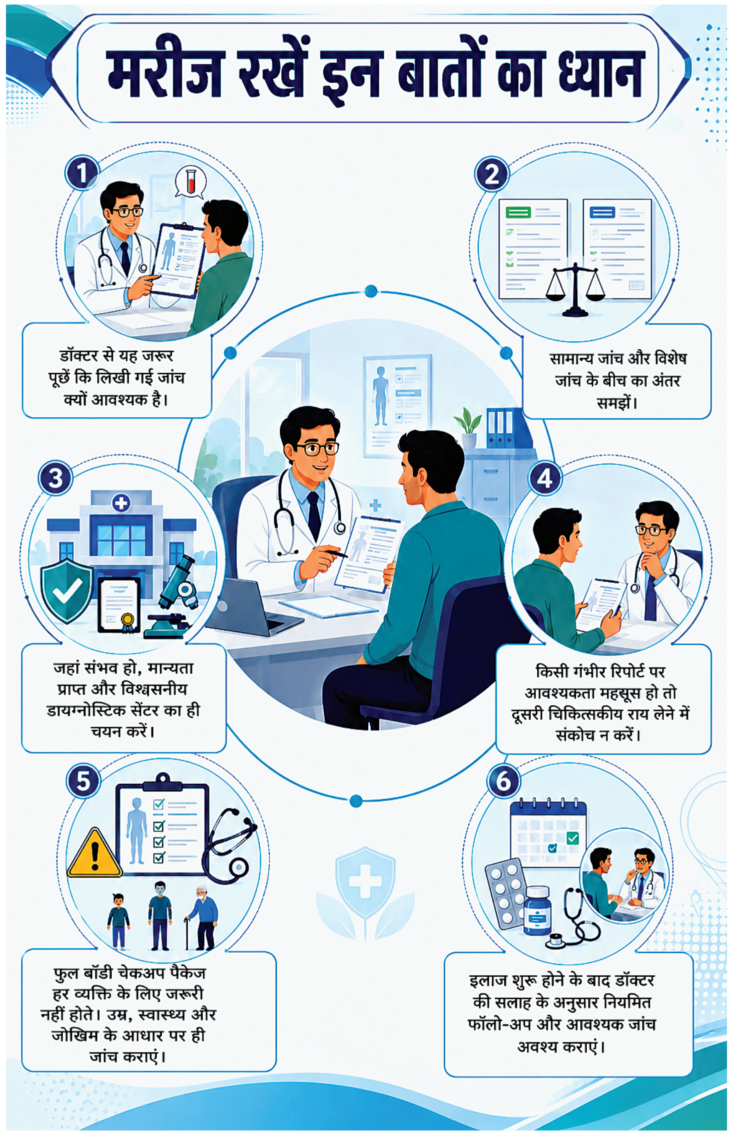

कब कराएं जांच

- जयपुर स्थित महात्मा गांधी चिकित्सा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. संदीप नरूला बताते हैं कि मोटे तौर पर जांचों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है। पहली श्रेणी नॉन-इन्वेसिव जांचों की होती है, जिन्हें सामान्य या छोटे टेस्ट भी कहा जाता है। इनमें खून, पेशाब, शुगर, लिवर, किडनी, कोलेस्ट्रॉल और ईसीजी जैसी जांचें शामिल हैं। इन जांचों में शरीर के भीतर किसी उपकरण या प्रक्रिया का उपयोग नहीं किया जाता, इसलिए इन्हें तुलनात्मक रूप से सुरक्षित और सामान्य माना जाता है।
- दूसरी श्रेणी में इन्वेसिव जांचें आती हैं, जिन्हें बड़े या जटिल टेस्ट कहा जाता है। इनमें शरीर के भीतर किसी प्रकार की प्रक्रिया, उपकरण या चीरा लगाकर जांच की जाती है। ऐसे टेस्ट केवल डॉक्टर की स्पष्ट सलाह पर ही कराए जाने चाहिए। इन्हें सामान्य जांच समझकर या किसी लैब के कहने पर नहीं कराना चाहिए।
- स्वास्थ्य विशेषज्ञों से बातचीत में यह बात सामने आई कि यदि कोई व्यक्ति सामान्य रूप से स्वस्थ है, उसे कोई बड़ी बीमारी नहीं है, उसकी जीवनशैली संतुलित है, वह नियमित व्यायाम करता है और नशे से दूर रहता है। साथ ही परिवार में भी किसी गंभीर बीमारी का इतिहास नहीं है, तो 35 वर्ष की उम्र से पहले उसे बार-बार जांच कराने की आवश्यकता नहीं होती। हालांकि 35 वर्ष के बाद हर दो से तीन वर्ष में कुछ बुनियादी जांचें कराई जा सकती हैं। इनमें सीबीसी, एलएफटी, केएफटी, लिपिड प्रोफाइल और ईसीजी जैसी जांचें शामिल हैं।

▪ यदि किसी व्यक्ति के परिवार में मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, थायरॉइड या किसी गंभीर बीमारी का इतिहास है, तो उसे 30 वर्ष की उम्र के बाद नियमित जांच शुरू कर देनी चाहिए। ऐसे लोग हर दो से तीन वर्ष में सामान्य जांच करा सकते हैं। 40 वर्ष के बाद यह अंतराल और कम कर देना चाहिए, जबकि 50 वर्ष की उम्र के बाद सालाना स्वास्थ्य जांच अधिक उपयुक्त मानी जाती है।

▪ प्रोफेसर डॉ. संदीप नरूला कहते हैं कि आज एक बड़ी समस्या यह भी है कि कुछ लोग जांच को अनावश्यक मानकर टाल देते हैं। वे डॉक्टर की लिखी सामान्य जांचें भी नहीं कराते। यह उतना ही नुकसानदायक है, जितना बिना जरूरत जांच कराना। कई बीमारियां शुरुआती अवस्था में केवल जांच के माध्यम से ही पकड़ में आती हैं। यदि समय रहते जांच न हो, तो बीमारी चुपचाप बढ़ती रहती है।

▪ उदाहरण के लिए, कई लोग वर्षों तक मधुमेह या उच्च रक्तचाप की दवा तो लेते रहते हैं, लेकिन बीच में न डॉक्टर को दिखाते हैं और न ही आवश्यक जांच कराते हैं। ऐसा करना खतरनाक हो सकता है। समय के साथ बीमारी की स्थिति बदल सकती है, दवा की मात्रा में बदलाव की जरूरत पड़ सकती है या दूसरी स्वास्थ्य समस्याएं भी जुड़ सकती हैं। इसलिए इलाज शुरू होने के बाद नियमित फॉलो-अप और तय समय पर जांच कराना भी उतना ही जरूरी है, जितना दवा लेना।

जांच या कारोबार?

मरीज अक्सर डॉक्टर पर भरोसा करके जांच कराता है। वह यह मानकर चलता है कि जो भी जांच लिखी गई है, वह उसके उपचार के लिए आवश्यक होगी। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में कई रिपोर्टों, अदालती टिप्पणियों और विशेषज्ञों ने इस बात पर चिंता जताई है कि कुछ अस्पतालों और निजी स्वास्थ्य संस्थानों में गैरजरूरी जांचों को बढ़ावा दिया जाता है। कुछ मीडिया रिपोर्टों में यह भी सामने आया है कि कुछ निजी अस्पतालों में डॉक्टरों पर अधिक जांचें और सर्जरी कराने का दबाव बनाया जाता है।

स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े लोगों का कहना है कि इस प्रवृत्ति के पीछे कई बार कमीशन की व्यवस्था भी एक कारण बनती है। समय-समय पर ऐसे आरोप लगते रहे हैं कि कुछ डॉक्टर मरीजों को उन्हीं डायग्नोस्टिक सेंटरों में भेजते हैं, जिनसे उनका व्यावसायिक संबंध होता है। ऐसी शिकायतें भी सामने आती रही हैं कि कुछ चिकित्सक सरकारी लैब की रिपोर्ट स्वीकार करने के बजाय मरीज को दोबारा किसी निजी लैब से जांच कराने की सलाह देते हैं। हालांकि यह पूरी चिकित्सा व्यवस्था की तस्वीर नहीं है, लेकिन ऐसी प्रवृत्तियां मरीजों का भरोसा कमजोर करती हैं।

▪ स्वास्थ्य जांच आधुनिक चिकित्सा की आधारशिला है। सही समय पर सही जांच अनेक बीमारियों की समय पर पहचान कर मरीज का जीवन बचा सकती है। लेकिन यदि जांचें चिकित्सकीय आवश्यकता के बजाय व्यावसायिक हितों से संचालित होने लगें, तो सबसे अधिक नुकसान मरीज का ही होता है। इसलिए जरूरत इस बात की है कि अनावश्यक जांचों पर प्रभावी रोक लगे, डायग्नोस्टिक सेंटरों की गुणवत्ता सुनिश्चित हो, कानून का सख्ती से पालन कराया जाए और मरीजों को भी जागरूक बनाया जाए। आखिरकार, स्वास्थ्य जांच का उद्देश्य केवल रिपोर्ट तैयार करना नहीं, बल्कि मरीज को सही, सुरक्षित और विश्वसनीय उपचार तक पहुंचाना है।

डायग्नोस्टिक सेंटरों की गुणवत्ता पर सवाल क्यों

▪ आधुनिक मशीनों की मदद से आज ब्लड, यूरिन और अन्य कई जांचें कम समय में संभव हो गई हैं। इसके कारण डायग्नोस्टिक सेवाओं के क्षेत्र में तेजी से निवेश बढ़ा है। सैंपल कलेक्शन सेंटरों का विस्तार हुआ है और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित रिपोर्टिंग जैसी नई तकनीकों ने इस कारोबार को नई गति दी है। लेकिन आधुनिक साज-सज्जा और कम समय में रिपोर्ट देने के दावों के बीच कई प्रयोगशालाओं की गुणवत्ता को लेकर गंभीर सवाल भी उठते रहे हैं।

▪ विशेषज्ञों का कहना है कि प्रशिक्षित टेक्नीशियन की कमी, नमूना संग्रह में लापरवाही, तापमान नियंत्रण के मानकों का पालन न होना, उपकरणों का समय-समय पर कैलिब्रेशन नहीं होना और डेटा प्रबंधन की कमजोर व्यवस्था जैसी कमियां जांच रिपोर्ट की विश्वसनीयता को प्रभावित कर सकती हैं। एक गलत जांच रिपोर्ट के आधार पर मरीज का उपचार भी गलत दिशा में जा सकता है, जिसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

▪ इन्हीं चुनौतियों को देखते हुए क्लीनिकल एस्टेब्लिशमेंट एक्ट, 2010 बनाया गया था, ताकि अस्पतालों और डायग्नोस्टिक केंद्रों का संचालन निर्धारित मानकों के अनुसार हो और मरीजों को गुणवत्तापूर्ण जांच सेवाएं मिल सकें। राजस्थान में भी इस कानून को मंजूरी मिल चुकी है और इसके नियम लागू किए जा चुके हैं। राज्य में प्रत्येक डायग्नोस्टिक सेंटर का क्लीनिकल एस्टेब्लिशमेंट एक्ट, 2010 के तहत पंजीकृत होना अनिवार्य है।

क्लीनिकल एस्टेब्लिशमेंट एक्ट, 2010 का नहीं हो रहा पालन

▪ राजस्थान प्रैक्टिसिंग पैथोलॉजिस्ट्स सोसाइटी के सचिव डॉ. रोहित जैन का कहना है कि राज्य में अब भी बड़ी संख्या में ऐसे डायग्नोस्टिक सेंटर संचालित हो रहे हैं, जिनका क्लीनिकल एस्टेब्लिशमेंट एक्ट, 2010 के तहत पंजीकरण नहीं है। कई केंद्र बिना योग्य पैथोलॉजिस्ट के ही चलाए जा रहे हैं। कुछ स्थानों पर केवल पैथोलॉजिस्ट के स्कैन किए गए हस्ताक्षरों के आधार पर काम चलाया जा रहा है, जबकि नियमों के अनुसार वहां योग्य पैथोलॉजिस्ट की उपस्थिति आवश्यक है।

▪ वे बताते हैं कि कुछ जगहों पर लैब टेक्नीशियन ही पूरी व्यवस्था संभाल रहे हैं और रिपोर्ट पर हस्ताक्षर भी वही कर रहे हैं। जबकि कानून की भावना स्पष्ट है कि पैथोलॉजिकल प्रयोगशाला की स्थापना, संचालन और रखरखाव केवल ऐसे योग्य व्यक्ति के नेतृत्व में होना चाहिए, जिसके पास पैथोलॉजी में एम.डी. अथवा क्लिनिकल पैथोलॉजी का डिप्लोमा हो। इसके बावजूद कई स्थानों पर नियमों की अनदेखी की जा रही है, जिससे गलत रिपोर्ट जारी होने की आशंका बनी रहती है।

▪ डॉ. रोहित जैन का कहना है कि किसी लैब या अस्पताल की फ्रेंचाइजी शाखा भी इन्हीं मानकों के अनुरूप संचालित होनी चाहिए। यदि कोई संस्थान

राज्य में कई शाखाएं चला रहा है, तो प्रत्येक शाखा में योग्य पैथोलॉजिस्ट की उपस्थिति सुनिश्चित की जानी चाहिए। केवल किसी प्रतिष्ठित ब्रांड का नाम या बोर्ड लगाकर जांच व्यवस्था नहीं चलाई जा सकती।

▪ इसी प्रकार जिन अस्पतालों, नर्सिंग होम और क्लीनिकों में इन-हाउस पैथोलॉजिकल लैब संचालित हो रही हैं, वहां भी अंतिम रिपोर्ट जारी करने वाला व्यक्ति योग्य पैथोलॉजिस्ट ही होना चाहिए। जांच की गंभीरता को देखते हुए यह केवल औपचारिकता नहीं, बल्कि मरीज की सुरक्षा से जुड़ी अनिवार्य शर्त है।

▪ सुप्रीम कोर्ट ने भी इस विषय पर स्पष्ट रुख अपनाया है। 12 दिसंबर, 2017 को दिए गए अपने आदेश में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था कि केवल पैथोलॉजी में पोस्ट ग्रेजुएट योग्यता रखने वाला पंजीकृत मेडिकल प्रैक्टिशनर ही सभी प्रयोगशाला रिपोर्टों पर हस्ताक्षर कर सकता है। इस आदेश का स्पष्ट संदेश है कि जांच रिपोर्ट केवल तकनीकी दस्तावेज नहीं, बल्कि चिकित्सकीय जिम्मेदारी है। इसलिए उसकी प्रमाणिकता और गुणवत्ता सुनिश्चित करना अनिवार्य है।

विदेश से ज्ञान, मातृभूमि को समर्पण : डॉ. विक्रम कल्ला

विदेश से लौटकर मातृभूमि की सेवा का संकल्प

कुछ लोग विदेश जाकर वहीं बस जाते हैं, लेकिन कुछ लोग विदेश से अर्जित ज्ञान को अपनी जन्मभूमि के विकास के लिए समर्पित कर देते हैं। डॉ. विक्रम कल्ला ऐसे ही प्रेरणादायी व्यक्तित्व हैं। आधुनिक चिकित्सा शिक्षा प्राप्त करने के बाद उन्होंने सुविधाओं से भरे विदेशी जीवन की बजाय राजस्थान लौटकर लोगों की सेवा का मार्ग चुना। आज वे ओसियां के रुक्मणी सोनोग्राफी सेंटर पर हजारों मरीजों को बेहतर उपचार और नई उम्मीद प्रदान कर रहे हैं।

संस्कारों ने गढ़ा संवेदनशील व्यक्तित्व

वर्ष 1978 में जोधपुर में जन्मे डॉ. विक्रम कल्ला का व्यक्तित्व भारतीय संस्कृति और पारिवारिक मूल्यों की मजबूत नींव पर विकसित हुआ। सामवेदी ब्राह्मण परंपरा से जुड़े परिवार में मिले आध्यात्मिक संस्कारों ने उनके भीतर करुणा, अनुशासन और सेवा की भावना विकसित की। यही कारण है कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में दक्ष होने के बावजूद उन्होंने मानवीय संवेदनाओं को हमेशा सर्वोच्च स्थान दिया।

चिकित्सा को बनाया सेवा का माध्यम

पिछले दो दशकों से अधिक समय से डॉ. कल्ला चिकित्सा को केवल पेशा नहीं, बल्कि समाज सेवा का माध्यम मानकर कार्य कर रहे हैं। उनके लिए हर मरीज केवल एक रोगी नहीं, बल्कि एक परिवार की उम्मीद है। सरल व्यवहार, आत्मीय संवाद और समर्पित उपचार ने उन्हें मरीजों के बीच विश्वास का पर्याय बना दिया है। यही विश्वास उनकी सबसे बड़ी पहचान है।

कोरोना संकट में निभाया मानवता का धर्म

कोविड-19 महामारी के कठिन दौर में डॉ. विक्रम कल्ला ने अपनी जिम्मेदारी से बढ़कर मानवता का परिचय दिया। उन्होंने अनेक जरूरतमंद मरीजों को निःशुल्क अथवा रियायती उपचार उपलब्ध कराया, चिकित्सकीय परामर्श दिया और हर संभव सहायता पहुंचाई। संकट की उस घड़ी में उनका समर्पण हजारों परिवारों के लिए संबल बना। उनकी निस्वार्थ सेवाओं के लिए अनेक सामाजिक संस्थाओं ने उन्हें सम्मानित भी किया।

पर्यावरण और समाज के प्रति प्रतिबद्धता

डॉ. कल्ला का मानना है कि स्वस्थ समाज का निर्माण केवल अस्पतालों से नहीं, बल्कि स्वच्छ और हरित पर्यावरण से भी होता है। यही सोच उन्हें वृक्षारोपण, पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक जागरूकता अभियानों से जोड़ती है। वे चिकित्सा सेवा के साथ प्रकृति संरक्षण को भी सामाजिक दायित्व मानते हैं।

परिवार : प्रेरणा और सहयोग की शक्ति

डॉ. विक्रम कल्ला की सफलता में उनके परिवार का महत्वपूर्ण योगदान है। उनकी धर्मपत्नी डॉ. नीलम कल्ला उच्च शिक्षाविद् हैं और वर्तमान में जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर में असिस्टेंट प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं। उनके पुत्र लक्ष्य कल्ला मेडिकल कॉलेज, कोटा में एमबीबीएस की पढ़ाई कर रहे हैं और परिवार की सेवा-परंपरा को आगे बढ़ाने की दिशा में अग्रसर हैं। यह परिवार शिक्षा, सेवा और सामाजिक उत्तरदायित्व का प्रेरक उदाहरण है।

समर्पण से बनी विशिष्ट पहचान

डॉ. विक्रम कल्ला ने अपने कार्य से सिद्ध किया है कि एक श्रेष्ठ चिकित्सक की पहचान केवल उसकी विशेषज्ञता से नहीं, बल्कि उसकी संवेदनशीलता, ईमानदारी और सेवा-भाव से होती है। विदेश से अर्जित ज्ञान, भारतीय संस्कारों से मिले जीवन-मूल्य और समाज के प्रति अटूट समर्पण ने उन्हें चिकित्सा जगत का सम्मानित नाम बनाया है।

आज वे केवल एक सफल चिकित्सक नहीं, बल्कि मानवता, सेवा और विश्वास के ऐसे प्रतीक हैं, जिनकी प्रेरक यात्रा आने वाली पीढ़ियों को यह संदेश देती है कि जब ज्ञान के साथ करुणा और सफलता के साथ सेवा जुड़ जाए, तभी जीवन वास्तव में सार्थक बनता है। शाम के समय डॉक्टर विक्रम कल्ला जोधपुर के पाल रोड स्थित कृष्णा सुपर स्पेशलिटी हॉस्पिटल में भी सेवाएं देते हैं। ताकि मरीजों को बेहतर उपचार मिल सके।

जब स्वास्थ्य बन जाए कारोबार

स्वास्थ्य अब केवल सेवा नहीं, बल्कि तेजी से फैलता हुआ कारोबार बन चुका है। बढ़ती बीमारियों ने दवाइयों, अस्पतालों, जांच और बीमा उद्योग को अभूतपूर्व विस्तार दिया है। सबसे बड़ा सवाल यह है कि हमारी स्वास्थ्य व्यवस्था इलाज पर इतनी केंद्रित क्यों है, जबकि बीमारियों से बचाव लगातार उपेक्षित होता जा रहा है।

मनीष गोधा,
वरिष्ठ पत्रकार

भारतीय संस्कृति में स्वास्थ्य को सबसे बड़ा धन माना गया है। हमारी परंपरा ने हमेशा रोग होने के बाद इलाज नहीं, बल्कि रोग से बचाव को प्राथमिकता दी। विडंबना यह है कि आज हमारी पूरी स्वास्थ्य व्यवस्था का केंद्र बचाव नहीं, बल्कि इलाज बन गया है। परिणाम यह है कि दवाइयों, अस्पतालों, जांच और स्वास्थ्य बीमा का बाजार लगातार फैलता जा रहा है, जबकि स्वस्थ जीवनशैली हमारी प्राथमिकताओं से दूर होती जा रही है।

आंकड़े बताते हैं कि स्वस्थ रहने की कीमत आज पहले से कहीं अधिक हो चुकी है। केंद्रीय वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय के ट्रस्ट इंडिया ब्रांड इक्विटी फाउंडेशन (आईबीईएफ) के अनुसार, भारत का हेल्थकेयर सेक्टर वर्ष 2016 में 9.43 हजार करोड़ रुपये का था, जो 2023 में बढ़कर 31.88 लाख करोड़ रुपये हो गया। वर्ष 2025 तक इसके लगभग 54.67 लाख करोड़ रुपये तक पहुंचने का अनुमान है। वर्ष 2022 में देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 3.3 प्रतिशत हिस्सा स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च हुआ, जिसके 2030 तक बढ़कर 5 प्रतिशत तक पहुंचने की संभावना है। इसी तरह वित्तीय वर्ष 2024 में हेल्थ इंश्योरेंस प्रीमियम 1.09 लाख करोड़ रुपये था, जो 2025 में बढ़कर 1.19 लाख करोड़ रुपये हो गया। ये आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि स्वास्थ्य सेवाओं के नाम पर खड़ा यह बाजार लगातार विस्तार कर रहा है।

अन्य अध्ययनों के अनुसार भारत के हेल्थकेयर बाजार में सबसे बड़ी हिस्सेदारी अस्पतालों और क्लीनिकों की है, जिसका आकार लगभग 98 अरब डॉलर है। भारतीय दवा उद्योग का बाजार करीब 50 अरब डॉलर और स्वास्थ्य एवं वेलनेस क्षेत्र का बाजार 160 अरब डॉलर से अधिक आंका गया है। भले ही ये अलग-अलग स्रोतों के अनुमान हों, लेकिन वे एक ही सच्चाई की ओर संकेत करते हैं कि स्वास्थ्य सेवाओं का यह विशाल बाजार अब हमारे खान-पान, जीवनशैली, उपचार और यहां तक कि जीवन के अंतिम चरण तक को प्रभावित कर रहा है।

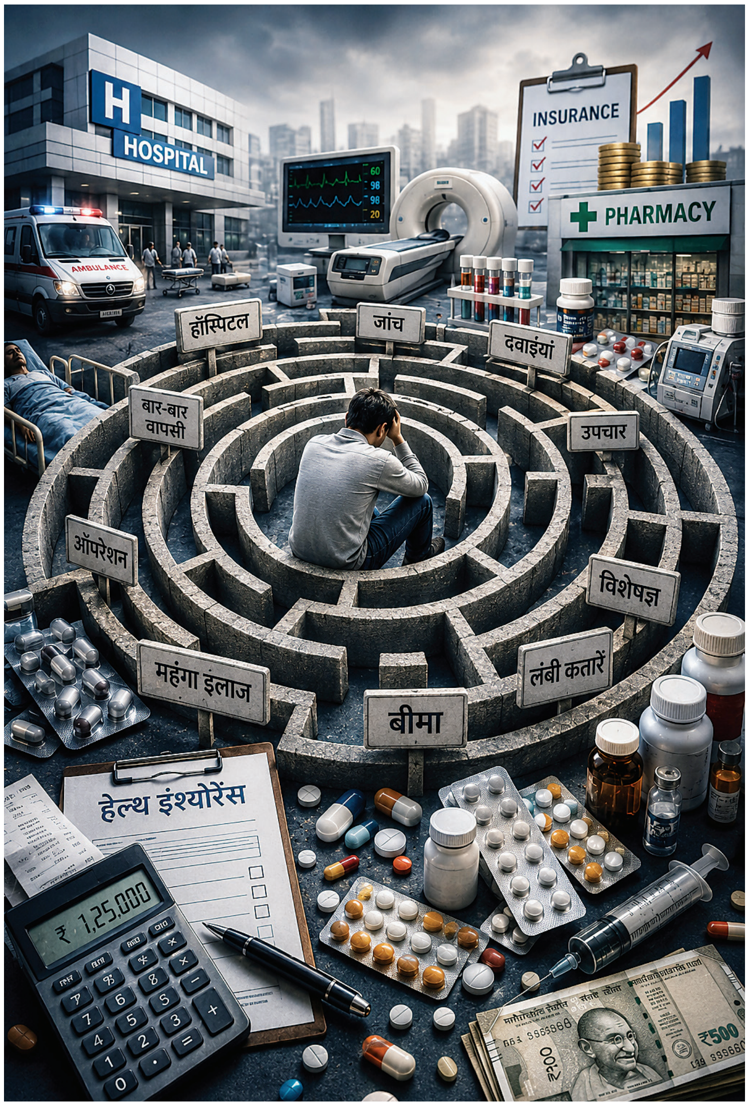

किन बीमारियों ने खड़ा किया इलाज का यह विशाल बाजार?

- सवाल यह है कि संयमित और अपेक्षाकृत स्वस्थ जीवन जीने वाला भारतीय समाज आखिर स्वास्थ्य सेवाओं के इस विशाल बाजार के चंगुल में फंसा कैसे? इसका उत्तर बहुत कठिन नहीं है। हम आज भी अपनी पिछली पीढ़ियों की उस जीवनशैली को याद करते हैं, जिसमें संतुलित भोजन, नियमित शारीरिक श्रम और प्रकृति के साथ सामंजस्य था। लेकिन समय के साथ हमारी दिनचर्या, खान-पान और जीवनशैली तेजी से बदलती गई। विडंबना यह है कि जिन परिस्थितियों ने इन रोगों को बढ़ावा दिया, उन्हीं के इर्द-गिर्द विकसित हुआ स्वास्थ्य बाजार अब उनके उपचार का सबसे बड़ा केंद्र बन गया है।
- आज हृदय रोग, मधुमेह, मोटापा और मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं तेजी से बढ़ रही हैं। इनमें से अधिकांश गैर-संचारी रोग अब कम उम्र में भी दिखाई देने लगे हैं। इन रोगों का उपचार प्रायः उन्हें पूरी तरह समाप्त करने के बजाय लंबे समय तक नियंत्रित रखने पर केंद्रित रहता है। परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में लोगों को वर्षों, बल्कि कई बार जीवनभर दवाइयों, नियमित जांचों और चिकित्सकीय निगरानी पर निर्भर रहना पड़ता है।
- अब सवाल यह है कि इन बीमारियों ने कितना बड़ा बाजार खड़ा कर दिया है और इनका समाज व अर्थव्यवस्था पर कितना गहरा असर पड़ रहा है। चिकित्सा विज्ञान में इन्हें गैर-संचारी रोग (नॉन-कम्युनिकेबल डिजीज़—एनसीडी) कहा जाता है। वर्ष 2017 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति ने हृदय रोग, मधुमेह और श्वसन संबंधी बीमारियों के तेजी से बढ़ने को लेकर गंभीर चेतावनी दी थी। अब ग्लोबल बर्डन ऑफ डिजीज की हालिया रिपोर्ट उन आशंकाओं को सही साबित करती है।

आज भारत में होने वाली कुल मौतों में लगभग 65 प्रतिशत मौतें हृदय रोग, मधुमेह, कैंसर और श्वसन संबंधी बीमारियों के कारण हो रही हैं। वर्ष 1990 में इन रोगों से होने वाली मौतों का हिस्सा 37.9 प्रतिशत था, जो 2023 तक बढ़कर 63 प्रतिशत से अधिक हो गया। इससे भी अधिक चिंता की बात यह है कि इन बीमारियों के कारण लगभग 25 प्रतिशत मौतें 30 से 70 वर्ष की आयु के बीच हो रही हैं। यानी देश की सबसे उत्पादक और कार्यशील आबादी का बड़ा हिस्सा समय से पहले इन रोगों की चपेट में आकर असमय मृत्यु का शिकार बन रहा है।

इन बीमारियों का असर केवल स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था पर भी भारी पड़ रहा है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार, गैर-संचारी रोगों और मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं के कारण वर्ष 2030 तक भारत को लगभग 4.58 ट्रिलियन डॉलर का आर्थिक नुकसान हो सकता है। इनमें अकेले हृदय रोगों से 2.17 ट्रिलियन डॉलर और मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से 1.03 ट्रिलियन डॉलर के नुकसान का अनुमान लगाया गया है।

अब कुपोषण नहीं, मोटापा बड़ी चुनौती

- भारत लंबे समय तक कुपोषित देशों की श्रेणी में गिना जाता रहा। एक समय कुपोषण और कम वजन देश की सबसे बड़ी स्वास्थ्य समस्याओं में शामिल थे, लेकिन हाल के अध्ययन बताते हैं कि अब मोटापा उससे भी बड़ी चुनौती बनकर उभर रहा है। नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे (एनएफएचएस) के अनुसार, पिछले सर्वेक्षण की तुलना में पुरुषों में मोटापा 44 प्रतिशत और महिलाओं में 41 प्रतिशत बढ़ा है।
- वर्ष 2019 में भारत में मोटापे का आर्थिक प्रभाव लगभग 2.4 लाख करोड़ रुपये आंका गया था, जिसके 2030 तक बढ़कर 6.7 लाख करोड़ रुपये तक पहुंचने का अनुमान है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, मशीनीकरण, बढ़ता स्क्रीन टाइम और शहरी कार्यशैली के कारण 31 प्रतिशत से अधिक वयस्क तथा लगभग 80 प्रतिशत किशोर पर्याप्त शारीरिक गतिविधि नहीं कर पा रहे हैं।

तंबाकू ने बढ़ाया कैंसर का खतरा

- भारत में हर वर्ष कैंसर के लगभग 16 लाख नए मामले सामने आते हैं, जबकि करीब 9 लाख लोगों की इस बीमारी से मृत्यु हो जाती है। अनुमान है कि लगभग हर नौ में से एक भारतीय को अपने जीवनकाल में कैंसर होने का खतरा रहता है। चिंता की बात यह है कि लगभग 60 से 70 प्रतिशत मामलों का पता तब चलता है, जब बीमारी एडवांस स्टेज में पहुंच चुकी होती है।
- देश में कैंसर के लगभग 27 प्रतिशत मामले तंबाकू के सेवन से जुड़े हैं। धूम्रपान, गुटखा, खैनी और अन्य तंबाकू उत्पाद आज भी कैंसर के सबसे बड़े कारणों में शामिल हैं। कैंसर के बढ़ते मामलों के साथ उपचार, दवाओं, रेडियोथेरेपी, कीमोथेरेपी और अत्याधुनिक चिकित्सा उपकरणों का बाजार भी लगातार विस्तार कर रहा है।

सांस की बीमारियां बनीं गंभीर संकट

- क्रोनिक ऑब्सट्रक्टिव पल्मोनरी डिजीज (सीओपीडी) सभी दीर्घकालिक श्वसन रोगों का लगभग 75 प्रतिशत हिस्सा है। इसके प्रमुख कारणों में घरों में ठोस ईंधन से निकलने वाला धुआं, शहरी वायु प्रदूषण और तंबाकू का सेवन शामिल हैं।
- स्टेट ऑफ ग्लोबल एयर 2024 के अनुसार, भारत में वायु प्रदूषण के कारण हर वर्ष 20 लाख से अधिक लोगों की मौत होती है। बढ़ते प्रदूषण और श्वसन रोगों के कारण इन्हेलर, ऑक्सीजन उपकरण तथा श्वसन संबंधी दवाओं का बाजार भी तेजी से बढ़ रहा है। वर्तमान में यह बाजार 4 अरब अमेरिकी डॉलर से अधिक का है और लगभग 7 प्रतिशत की वार्षिक दर से विस्तार कर रहा है।

डायबिटीज का बढ़ता दायरा

- बदलती जीवनशैली ने मधुमेह को देश की सबसे बड़ी स्वास्थ्य चुनौतियों में शामिल कर दिया है। भारत में लगभग 10 करोड़ लोग मधुमेह और 13.1 करोड़ लोग प्री-डायबिटीज से प्रभावित हैं। सबसे बड़ी चिंता यह है कि लगभग आधे मरीजों को लंबे समय तक यह पता ही नहीं चलता कि वे इस बीमारी से पीड़ित हैं। जब तक बीमारी का पता चलता है, तब तक कई मामलों में शरीर के महत्वपूर्ण अंग प्रभावित हो चुके होते हैं।
- मधुमेह रोगियों की बढ़ती संख्या के साथ दवाओं, इंसुलिन, ग्लूकोमीटर, कंटीन्यूअस ग्लूकोज मॉनिटरिंग सिस्टम और अन्य चिकित्सा उपकरणों का बाजार भी तेजी से विस्तार कर रहा है। अनुमान है कि इस क्षेत्र का बाजार वर्तमान 5.4 अरब डॉलर से बढ़कर वर्ष 2034 तक लगभग 15 अरब डॉलर तक पहुंच सकता है।

हर घर तक पहुंच चुका हृदय रोग

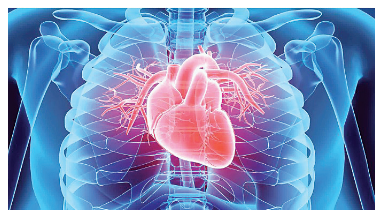

विभिन्न अध्ययनों के अनुसार, भारत में होने वाली कुल मौतों में लगभग 32 प्रतिशत हृदय रोगों के कारण होती हैं। राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) के आंकड़ों के अनुसार, पिछले सात वर्षों में हृदय रोगों के मामले लगभग तीन गुना बढ़कर प्रति एक लाख आबादी पर 3,891 तक पहुंच गए हैं।

बढ़ते मरीजों की संख्या के कारण हृदय चिकित्सा से जुड़े अस्पतालों, एंजियोप्लास्टी, बाईपास सर्जरी, स्टेंट, पेसमेकर, जांच उपकरणों और दवाओं का बाजार भी लगातार विस्तार कर रहा है। हृदय रोग संबंधी दवाओं का बाजार 10.7 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर के साथ 2,600 करोड़ रुपये का आंकड़ा पार कर चुका है।

मानसिक स्वास्थ्य भी संकट में

जीवनशैली और खान-पान में बदलाव के साथ तनाव, अवसाद, चिंता और अन्य मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं में भी तेजी से वृद्धि हुई है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार, वर्ष 2013 से 2023 के बीच एंग्जायटी डिसऑर्डर के मामलों में 63 प्रतिशत और डिप्रेशन के मामलों में 26 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है।

एक समय मानसिक रोगों के उपचार को लेकर समाज में झिझक और जागरूकता की कमी थी। लोग मनोचिकित्सक के पास जाने से बचते थे, लेकिन अब स्थिति तेजी से बदल रही है। जागरूकता बढ़ने के साथ परामर्श सेवाओं, मनोचिकित्सा, एंटी-डिप्रेसेंट दवाओं, ऑनलाइन काउंसिलिंग और मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं का बाजार भी तेजी से विस्तार कर रहा है। वर्ष 2025 में इसका अनुमानित आकार लगभग 21 अरब डॉलर था, जो 2034 तक बढ़कर 27 अरब डॉलर तक पहुंच सकता है।

इन सभी उदाहरणों से स्पष्ट है कि जीवनशैली से जुड़ी बीमारियां केवल स्वास्थ्य का संकट नहीं रह गई हैं। उन्होंने दवाइयों, अस्पतालों, चिकित्सा उपकरणों, जांच, बीमा और स्वास्थ्य सेवाओं का एक विशाल आर्थिक तंत्र खड़ा कर दिया है, जो हर वर्ष और अधिक विस्तृत होता जा रहा है। इसी कारण अब सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि क्या हमारी स्वास्थ्य व्यवस्था का केंद्र केवल इलाज होना चाहिए, या फिर बीमारी होने से पहले उसे रोकने पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए?

पिता का सपना, बच्चों का संकल्प

जब डॉक्टर बनना केवल पेशा नहीं, सेवा का व्रत बन गया

डॉ. भावना गहलोत

भगाराम गहलोत

डॉ. सुरेंद्र गहलोत

कहते हैं, हर पिता अपनी संतान की सफलता का सपना देखता है। लेकिन कुछ सपने ऐसे होते हैं, जो केवल परिवार की खुशियों तक सीमित नहीं रहते, बल्कि समाज के जीवन में भी उम्मीद की नई किरण बन जाते हैं। पाली के डॉ. सुरेंद्र गहलोत और उनकी बहन डॉ. भावना गहलोत की कहानी भी ऐसे ही एक सपने की कहानी है—एक पिता के विश्वास, एक मां की प्रार्थनाओं और बच्चों के अथक परिश्रम की कहानी। यह केवल दो भाई-बहन के डॉक्टर बनने की सफलता नहीं है, बल्कि उन संस्कारों की जीत है, जिन्होंने उन्हें यह सिखाया कि चिकित्सा केवल आजीविका नहीं, बल्कि मानव सेवा का सबसे पवित्र माध्यम है।

सपनों की राह पर सेवा का संकल्प

डॉ. सुरेंद्र गहलोत ने पाली में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद कजाकिस्तान से एमबीबीएस की डिग्री हासिल की। बांगड़ अस्पताल में सेवाएं देने के बाद वे वर्तमान में पीजी की पढ़ाई कर रहे हैं। उनका मानना है कि डॉक्टर की पहचान उसकी डिग्री से नहीं, बल्कि मरीज के चेहरे पर लौटाई गई मुस्कान से होती है। उनका सपना है कि गांवों और दूर-दराज़ के आर्थिक रूप से कमजोर लोगों तक भी गुणवत्तापूर्ण चिकित्सा सुविधाएं पहुंचें। वे चाहते हैं कि कोई भी व्यक्ति केवल संसाधनों के अभाव में इलाज से वंचित न रहे। उनकी पत्नी योगिता गहलोत, जो पेशे से चार्टर्ड अकाउंटेंट हैं, इस सेवा-यात्रा में हर कदम पर उनका संबल बनी हुई हैं।

मां-पिता के संस्कार बने जीवन की दिशा

डॉ. भावना गहलोत ने उदयपुर से एमबीबीएस की डिग्री प्राप्त की और वर्तमान में पीजी की तैयारी कर रही हैं। वे मानती हैं कि उनके जीवन की सबसे बड़ी प्रेरणा उनके माता-पिता हैं। उनका विश्वास है कि चिकित्सा सेवा का वास्तविक अर्थ तब है, जब उसका लाभ अंतिम पंक्ति में खड़े जरूरतमंद व्यक्ति तक पहुंचे। उनका लक्ष्य केवल एक सफल डॉक्टर बनना नहीं, बल्कि गरीब, असहाय और वंचित लोगों के जीवन में आशा का संचार करना है।

जब पिता का सपना सच हुआ

पाली के सूरजपोल स्थित प्रतिष्ठित 'भावना मेडिकल' के संचालक भगाराम गहलोत वर्षों से मेडिकल व्यवसाय के साथ समाज सेवा से जुड़े रहे हैं। उनकी धर्मपत्नी उषा देवी की भी यही इच्छा थी कि उनके दोनों बच्चे डॉक्टर बनें। अपने ज्ञान का उपयोग मानव सेवा में करें। आज बेटा-बेटी चिकित्सा क्षेत्र में समाज सेवा का संकल्प निभा रहे हैं, तब माता-पिता के वर्षों पुराने सपने को साकार होते देख उनका गर्व व संतोष सहज महसूस किया जा सकता है।

सेवा की विरासत, जो पीढ़ियों तक चलेगी

कोरोना महामारी के कठिन दौर में भगाराम गहलोत ने जरूरतमंद लोगों को निशुल्क दवाइयां उपलब्ध कराकर मानवता का परिचय दिया। सेवा और संवेदनशीलता की यही विरासत आज उनके बच्चों के व्यक्तित्व और कार्यशैली में भी दिखाई देती है। उन्होंने अपने माता-पिता से सीखा कि जीवन का सबसे बड़ा धर्म दूसरों के दुख को कम करना है।

युवाओं के लिए एक जीवंत प्रेरणा

डॉ. सुरेंद्र गहलोत और डॉ. भावना गहलोत की कहानी बताती है कि सफलता तब सबसे सुंदर बनती है, जब उसमें परिवार के संस्कार, मेहनत और समाज के प्रति समर्पण का भाव शामिल हो। वे केवल डॉक्टर नहीं हैं, बल्कि नई पीढ़ी के लिए यह संदेश हैं कि जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि ऊंचा पद या प्रतिष्ठा नहीं, बल्कि अपने ज्ञान और कर्म से किसी की जिंदगी में उम्मीद, राहत और मुस्कान लौटाना है।

यही वह विरासत है, जो किसी भी परिवार को महान बनाती है और समाज को बेहतर भविष्य की ओर ले जाती है।

सुरक्षा का वादा, भरोसे की परीक्षा

बढ़ते इलाज खर्च के दौर में स्वास्थ्य बीमा हर परिवार की जरूरत बन गया है। लेकिन कैशलेस इलाज में देरी, क्लेम विवाद और जटिल शर्तों ने कई बीमाधारकों का भरोसा डगमगाया है। जरूरत बीमा से दूरी बनाने की नहीं, बल्कि व्यवस्था को अधिक पारदर्शी, जवाबदेह और उपभोक्ता हितैषी बनाने की है।

हरीश मलिक,
✍ वरिष्ठ पत्रकार

आज के दौर में मध्यमवर्गीय परिवार पर सबसे बड़ा आर्थिक संकट तब आता है, जब घर का कोई सदस्य गंभीर बीमारी की चपेट में आ जाता है। हृदय रोग, कैंसर, किडनी प्रत्यारोपण, लिवर ट्रांसप्लांट या किसी बड़े हादसे का इलाज कुछ ही दिनों में लाखों रुपये खर्च करा देता है। ऐसे समय में स्वास्थ्य बीमा आर्थिक सुरक्षा का सबसे बड़ा संबल बन जाता है। लोग वर्षों तक प्रीमियम इसलिए भरते हैं, ताकि विपत्ति की घड़ी में उन्हें इलाज के लिए पैसों की चिंता न करनी पड़े। विशेष रूप से कैशलेस स्वास्थ्य बीमा का मूल उद्देश्य यही है कि मरीज बिना किसी आर्थिक बोझ व परेशानी के तत्काल अस्पताल में भर्ती हो सके और उसका उपचार निर्बाध रूप से हो। दुर्भाग्य से कुछ मामलों में वास्तविकता इससे अलग दिखाई देती है। जरूरत पड़ने पर मरीज और उसके परिजनों को कई बार ऐसी औपचारिकताओं से गुजरना पड़ता है कि बीमारी के साथ-साथ बीमा क्लेम को लेकर भी मानसिक तनाव बढ़ जाता है।

ऐसी परिस्थितियां बताती हैं कि नियामकीय व्यवस्था को और अधिक प्रभावी तथा जवाबदेह बनाने की आवश्यकता है, ताकि कैशलेस स्वास्थ्य बीमा वाले प्रत्येक बीमाधारक को बिना अनावश्यक बाधा समय पर उपचार मिल सके। साथ ही, बिना उचित कारण क्लेम में देरी करने, अनावश्यक आपत्तियां लगाने या मरीज को परेशान करने वाले अस्पतालों, बीमा कंपनियों और संबंधित एजेंसियों के विरुद्ध प्रभावी कार्रवाई भी सुनिश्चित हो।

कैशलेस, लेकिन कितना सहज?

स्वास्थ्य बीमा का सबसे बड़ा आकर्षण कैशलेस उपचार है। बीमा लेते समय लोगों को बताया जाता है कि सूचीबद्ध अस्पतालों में बिना तत्काल भुगतान के इलाज हो सकेगा। व्यवहार में यह सुविधा अधिकांश मामलों में उपलब्ध होती है, लेकिन कई बार अंतिम स्वीकृति मिलने में अनावश्यक समय लग जाता है। ऐसी स्थिति में मरीज के परिजनों को अस्पताल के बिलिंग काउंटर, बीमा कंपनी और थर्ड पार्टी एडमिनिस्ट्रेटर (टीपीए) के बीच बार-बार संपर्क करना पड़ता है। गंभीर बीमारी के समय हर मिनट महत्वपूर्ण होता है। यदि तकनीकी प्रक्रिया के कारण अनावश्यक विलंब हो, तो यह मानसिक तनाव कई गुना बढ़ा देता है।

बीमा कंपनियों का यह तर्क भी उचित है कि प्रत्येक दावे का सत्यापन आवश्यक होता है, ताकि फर्जी दावों पर रोक लगाई जा सके। लेकिन यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि सत्यापन की प्रक्रिया वास्तविक मरीज के उपचार में बाधा न बने। तकनीकी जांच और मानवीय संवेदनशीलता के बीच संतुलन बनाना समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

क्लेम विवाद क्यों बढ़ते हैं?

- स्वास्थ्य बीमा को लेकर सबसे अधिक असंतोष क्लेम से जुड़ा दिखाई देता है। कई बार बीमाधारकों को लगता है कि उनकी अपेक्षा के अनुरूप भुगतान नहीं हुआ या उनका दावा स्वीकार नहीं किया गया। दूसरी ओर, बीमा कंपनियां पॉलिसी की शर्तों, अपवादों और दस्तावेजों के आधार पर निर्णय लेने की बात कहती हैं।
- यहीं सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है। यदि किसी दावे में वास्तव में कमी है, तो उसे अस्वीकार करने का अधिकार बीमा कंपनी के पास होना चाहिए। लेकिन यदि वही मामला बाद में अतिरिक्त दस्तावेज, पुनर्विचार या शिकायत निवारण की प्रक्रिया के बाद स्वीकार हो जाता है, तो यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि प्रारंभिक स्तर पर अधिक स्पष्ट और संवेदनशील निर्णय क्यों नहीं लिया गया। ऐसी स्थितियां बीमाधारकों का भरोसा कमजोर करती हैं।

छोटे अक्षरों में छिपी बड़ी बातें

- स्वास्थ्य बीमा पॉलिसी के दस्तावेज में अनेक नियम, प्रतीक्षा अवधि, सह-भुगतान, कमरे के किराये की सीमा और अन्य शर्तें लिखी होती हैं। समस्या यह नहीं कि शर्तें हैं, बल्कि यह है कि अधिकांश लोग उन्हें समझ ही नहीं पाते।
- कई बार महत्वपूर्ण बातें छोटे अक्षरों में लिखी होती हैं। कानूनी और तकनीकी भाषा में तैयार दस्तावेज सामान्य व्यक्ति के लिए कठिन हो जाते हैं। अधिकांश लोग एजेंट के भरोसे पॉलिसी खरीद लेते हैं और पूरा दस्तावेज पढ़ नहीं पाते। संकट की घड़ी में जब उन्हें किसी शर्त का पता चलता है, तो स्वाभाविक रूप से निराशा होती है। यह स्थिति व्यवस्था की पारदर्शिता पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा करती है।

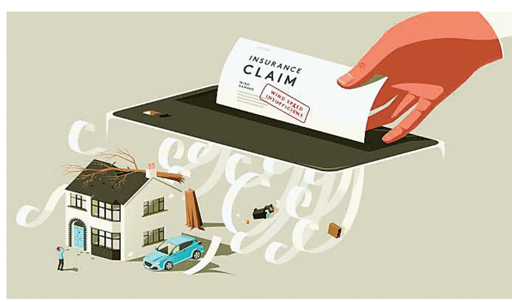

एजेंट की भूमिका केवल बिक्री तक क्यों?

▪ स्वास्थ्य बीमा खरीदते समय अधिकांश लोग सीधे बीमा कंपनी के बजाय एजेंट या सलाहकार पर भरोसा करते हैं। ऐसे में एजेंट की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। यदि एजेंट केवल प्रीमियम, बोनस और सुविधाओं की जानकारी दे, लेकिन अपवाद, प्रतीक्षा अवधि और सीमाओं पर पर्याप्त चर्चा न करे, तो बाद में विवाद की संभावना बढ़ जाती है।

▪ एजेंट केवल पॉलिसी बेचने तक सीमित न रहे, बल्कि उसे मुख्य शर्तें, अपवाद और प्रतीक्षा अवधि सरल भाषा में समझानी चाहिए। दरअसल, बीमा खरीदते समय सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह नहीं होना चाहिए कि 'प्रीमियम कितना है?', बल्कि यह होना चाहिए कि 'किन परिस्थितियों में मुझे लाभ मिलेगा और किन परिस्थितियों में नहीं?'

कुछ निजी अस्पताल भी कम जिम्मेदार नहीं

▪ बीमा दावों में बढ़ती जटिलताओं के लिए केवल बीमा कंपनियां ही जिम्मेदार नहीं हैं, बल्कि कुछ निजी अस्पतालों में सामने आई अनियमितताएं भी इस संकट की एक बड़ी वजह हैं। कई अस्पतालों पर अनावश्यक रूप से मरीजों को भर्ती दिखाने, ओपीडी मरीजों को आईपीडी में बदलने, इलाज की अवधि बढ़ाकर बिल बढ़ाने, गैर-जरूरी जांच और प्रक्रियाएं जोड़ने तथा फर्जी क्लेम के जरिए बीमा राशि हासिल करने जैसी अनियमितताओं के आरोप लग चुके हैं।

▪ हाल ही में राजस्थान की आरजीएचएस योजना में सामने आए करोड़ों रुपये के कथित फर्जीवाड़े ने इस प्रवृत्ति की गंभीरता को उजागर किया है। ऐसे मामलों का सबसे बड़ा खामियाजा उन वास्तविक मरीजों को भुगतना पड़ता है, जिन्हें इलाज की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। ऐसी अनियमितताओं के कारण बीमा कंपनियां कई मामलों में अधिक गहन जांच करती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि वास्तविक मरीजों के क्लेम की मंजूरी में भी देरी हो जाती है और उपचार प्रभावित होने का खतरा बढ़ जाता है।

मरीज का अधिकार है स्पष्ट जानकारी

▪ स्वास्थ्य बीमा में नियम और शर्तें स्वाभाविक हैं, लेकिन वे इतनी जटिल नहीं होनी चाहिए कि सामान्य व्यक्ति उन्हें समझ ही न सके। आज भी अनेक पॉलिसियों में मुख्य जानकारी छोटे अक्षरों और कानूनी भाषा में लिखी होती है, जिससे बीमाधारक यह नहीं समझ पाता कि कौन-सी बीमारी, कौन-सी सीमा और किन परिस्थितियों में दावा स्वीकार होगा।

▪ यह स्थिति बदलनी होगी। जिस प्रकार दवा के पत्ते पर उसकी मात्रा, सावधानियां और दुष्प्रभाव स्पष्ट लिखे जाते हैं, उसी प्रकार स्वास्थ्य बीमा की मुख्य शर्तें भी पहले पृष्ठ पर बड़े, स्पष्ट और आसानी से पढ़े जा सकने वाले अक्षरों में लिखी जानी चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह जानकारी सरल हिंदी में और बड़े, स्पष्ट अक्षरों में उपलब्ध कराना अनिवार्य होना चाहिए। अधिकांश उपभोक्ताओं को वही भाषा समझ आती है, जिसमें वे अपना दैनिक जीवन जीते हैं।

इलाज पहले, विवाद बाद में

स्वास्थ्य बीमा व्यवस्था में सबसे अधिक मानवीय सुधार इसी क्षेत्र में किया जा सकता है। यदि अस्पताल और बीमा कंपनी के बीच किसी तकनीकी बिंदु पर मतभेद है, तो वह मरीज के उपचार में बाधा नहीं बनना चाहिए। जहां प्रथम दृष्टया पॉलिसी लागू होती दिखाई देती हो, वहां 'पहले उपचार, बाद में विवाद' का सिद्धांत अपनाने पर गंभीरता से विचार होना चाहिए। यदि बाद में किसी अतिरिक्त दस्तावेज या स्पष्टीकरण की आवश्यकता हो, तो वह प्रक्रिया अलग से पूरी की जा सकती है।

पारदर्शिता ही विश्वास की नींव

बीमा कंपनी यदि किसी दावे को पूरी तरह या आंशिक रूप से स्वीकार करती है, तो उसका आधार स्पष्ट होना चाहिए। यदि किसी कारण से दावा अस्वीकार किया जाता है, तो उसका कारण भी सरल हिंदी में लिखा जाना चाहिए, ताकि बीमाधारक समझ सके कि निर्णय किस आधार पर लिया गया है। जटिल कानूनी भाषा में लिखे गए उत्तर उपभोक्ता की समस्या का समाधान नहीं करते, बल्कि भ्रम और बढ़ाते हैं।

आमजन भी रहें जागरूक

▪ बीमा व्यवस्था में जितनी जिम्मेदारी कंपनियों की है, उतनी ही जागरूकता उपभोक्ताओं की भी आवश्यक है। पॉलिसी खरीदते समय केवल कम प्रीमियम देखकर निर्णय नहीं लेना चाहिए। यह देखना भी जरूरी है कि बीमा राशि पर्याप्त है या नहीं, कौन-सी बीमारियां शामिल हैं, किन परिस्थितियों में दावा नहीं मिलेगा, नेटवर्क अस्पताल कौन-से हैं और दस्तावेजों की क्या आवश्यकता होगी।

▪ अस्पताल में भर्ती होने पर सभी जांच रिपोर्ट, बिल और चिकित्सकीय अभिलेख सुरक्षित रखने चाहिए। यदि किसी निर्णय से असहमति हो, तो उसका लिखित कारण मांगना चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर उपलब्ध शिकायत निवारण व्यवस्था का उपयोग करना चाहिए। जागरूक उपभोक्ता न केवल अपने अधिकारों की बेहतर रक्षा कर सकता है, बल्कि अनावश्यक विवादों से भी बच सकता है।

बीमा सिस्टम में क्या बदलाव होना चाहिए?

स्वास्थ्य बीमा व्यवस्था को अधिक पारदर्शी और विश्वसनीय बनाने के लिए कुछ व्यावहारिक सुधार आवश्यक हैं। सबसे पहले प्रत्येक पॉलिसी के पहले पृष्ठ पर मुख्य शर्तें, अपवाद, प्रतीक्षा अवधि और सह-भुगतान सहित सभी महत्वपूर्ण जानकारियां बड़े, स्पष्ट अक्षरों में सरल हिंदी में देना अनिवार्य किया जाए।

दूसरा, बीमा एजेंट यह प्रमाणित करे कि उसने ग्राहक को पॉलिसी की प्रमुख शर्तें समझाई हैं।

तीसरा, गंभीर और आपातकालीन मामलों में त्वरित निर्णय हो, जिससे इलाज में देरी न हो।

चौथा, शिकायतों के निस्तारण की प्रक्रिया सरल, समयबद्ध और उपभोक्ता हितैषी बनाई जाए।

पांचवां, बीमा कंपनियों की जवाबदेही के साथ ही फर्जी बिलिंग और बीमा धोखाधड़ी करने वाले अस्पतालों के विरुद्ध भी कठोर कार्रवाई हो।

स्वास्थ्य बीमा तभी अपने उद्देश्य को पूरा करेगा, जब वह कागजों में दर्ज एक अनुबंध भर न रहकर बीमारी की सबसे कठिन घड़ी में विश्वास का सच्चा सहारा बने। यही बीमाधारकों की उचित अपेक्षा है और यही एक भरोसेमंद, पारदर्शी तथा संवेदनशील स्वास्थ्य व्यवस्था की पहचान भी है। आखिर बीमा का वास्तविक मूल्य पॉलिसी के कागजों से नहीं, बल्कि संकट की घड़ी में निभाए गए भरोसे से तय होता है।

सही तकनीक • सटीक योजना • बेहतर परिणाम

जब रोबोटिक KNEE और HIP

रिप्लेसमेंट उपलब्ध है,
तो फिर
पारंपरिक क्यों ?

CUVIS®
by CUREXO,
South Korea

VELYS®
by DePuy Synthes
Johnson & Johnson, USA

VELYS™ VHN
by DePuy Synthes
Johnson & Johnson, USA

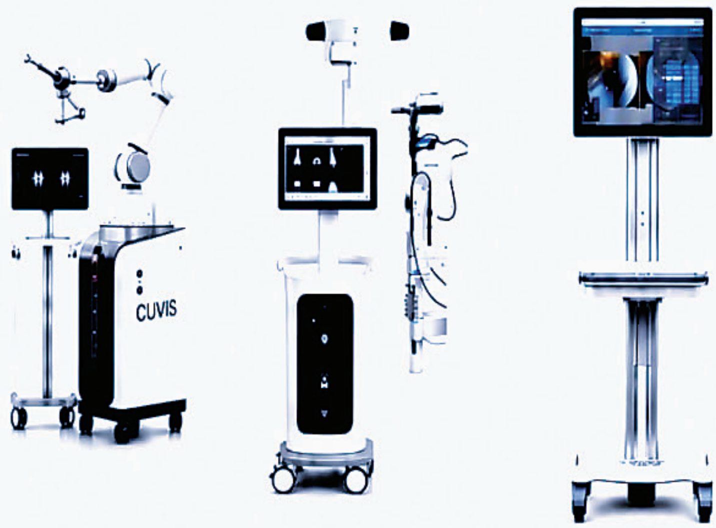

अधिक सटीकता | पैनलैस | तेज रिकवरी | कम जटिलताएँ, बेहतर आराम

200+ जोड़ प्रत्यारोपण सिर्फ 2 महीनों में

अधिक सटीकता
कम दर्द • तेज रिकवरी

नया युग, नयी तकनीक. **बेहतर जीवन**

Bone, Joint & Spine — TOTAL ORTHOPEDIC SOLUTION
BONE & JOINT HOSPITAL
JODHPUR

सम्राट अशोक उद्यान के सामने,
पाल रोड, जोधपुर (राज.)
+91 92160 80071,
0291-2110000
www.boneandjointhospital.co.in

PATIENT SAFETY & QUALITY OF CARE — NABH — ACCREDITED

कानून का असली धर्म : अधिकारों की रक्षा

यही सभ्य समाज की पहचान

किसी भी सभ्य समाज की सबसे बड़ी ताकत उसकी आर्थिक समृद्धि नहीं, बल्कि उसकी न्याय व्यवस्था होती है। जिस देश में प्रत्येक नागरिक को यह विश्वास हो कि उसके अधिकार सुरक्षित हैं, वहीं लोकतंत्र वास्तव में मजबूत माना जाता है। इस विश्वास को बनाए रखने की जिम्मेदारी केवल न्यायालयों या न्यायाधीशों की नहीं, बल्कि उन युवाओं की भी है जो आज विधि की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

सर प्रताप विधि महाविद्यालय के वार्षिकोत्सव में सिक्किम के राज्यपाल श्री ओमप्रकाश माथुर ने कहा कि कानून के विद्यार्थियों का दायित्व केवल वकालत करना नहीं, बल्कि नागरिकों के अधिकारों, संविधान और न्याय व्यवस्था की रक्षा करना है। यह संदेश केवल विधि विद्यार्थियों के लिए नहीं, बल्कि पूरे समाज के लिए एक महत्वपूर्ण सीख है।

विधि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य

विधि शिक्षा का लक्ष्य केवल सफल अधिवक्ता तैयार करना नहीं है। इसका वास्तविक उद्देश्य ऐसे नागरिक गढ़ना है जो न्याय, सत्य और संवैधानिक मूल्यों के प्रति समर्पित हों। अदालत में मुकदमा जीतना पेशे की सफलता हो सकती है, लेकिन किसी पीड़ित को न्याय दिलाना जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है। यही अंतर एक साधारण वकील और एक सच्चे विधिवेत्ता के बीच दिखाई देता है।

भारत का संविधान दुनिया के सबसे व्यापक लोकतांत्रिक दस्तावेजों में से एक है। इसमें नागरिकों के अधिकारों और कर्तव्यों का संतुलित स्वरूप निहित है। लेकिन संविधान तभी जीवंत रहता है, जब उसके मूल्यों को समाज और कानून के जानकार अपने आचरण में उतारते हैं।

बदलते समय की नई चुनौतियाँ

आज कानून की दुनिया तेजी से बदल रही है। साइबर अपराध, डिजिटल धोखाधड़ी, पर्यावरण संरक्षण, महिला सुरक्षा, निजता का अधिकार और कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसे विषय न्याय व्यवस्था के सामने नई चुनौतियाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। ऐसे समय में विधि के विद्यार्थियों को केवल पाठ्यपुस्तकों तक सीमित नहीं रहना चाहिए। उन्हें समाज की बदलती आवश्यकताओं को समझते हुए अपने ज्ञान को संवेदनशीलता और नैतिकता से जोड़ना होगा।

एक अच्छे अधिवक्ता की पहचान केवल उसकी दलीलों से नहीं होती, बल्कि उसकी मानवीय दृष्टि से भी होती है। प्रत्येक मुकदमे के पीछे किसी व्यक्ति का सम्मान, किसी परिवार की पीड़ा और किसी नागरिक की उम्मीद जुड़ी होती है। इसलिए कानून का अध्ययन जितना बुद्धि का विषय है, उतना ही संवेदना का भी।

डिग्री नहीं, जिम्मेदारी का आरंभ

वार्षिकोत्सव में मेधावी विद्यार्थियों को डिग्रियाँ प्रदान की गईं। यह सम्मान केवल उनकी शैक्षणिक सफलता का प्रतीक नहीं, बल्कि समाज द्वारा उन पर व्यक्त किए गए विश्वास का भी संकेत है। डिग्री हाथ में आने के साथ ही जिम्मेदारियाँ भी बढ़ जाती हैं। अब उनका ज्ञान केवल व्यक्तिगत करियर तक सीमित नहीं रह सकता, बल्कि उसे समाज के व्यापक हित में उपयोग करना होगा।

केंद्रीय पर्यटन एवं संस्कृति मंत्री श्री गजेंद्र सिंह शेखावत ने इस अवसर पर कहा कि जोधपुर के विधि विद्यार्थी देश के उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय तक अपनी प्रतिभा का परिचय दे रहे हैं। यह निश्चित रूप से गौरव का विषय है, किंतु उससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि वे न्याय और नैतिकता की परंपरा को आगे बढ़ाएँ।

ज्ञान के साथ चरित्र भी जरूरी... किसी भी शिक्षण संस्थान की वास्तविक सफलता उसके भवनों या परीक्षा परिणामों से नहीं, बल्कि उसके विद्यार्थियों के चरित्र और सामाजिक योगदान से मापी जाती है। यदि कोई विधि स्नातक समाज में न्याय, पारदर्शिता और संवैधानिक मूल्यों की रक्षा करता है, तो वही उस संस्थान की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

देश को ऐसे युवा विधिवेत्ताओं की आवश्यकता है जो कानून को केवल पेशा नहीं, बल्कि जनसेवा का माध्यम मानें। जो अधिकारों की रक्षा करें, कर्तव्यों का सम्मान करें और संविधान के आदर्शों को अपने जीवन में उतारें।

लोकतंत्र के सच्चे प्रहरी... कानून की पुस्तकें ज्ञान देती हैं, लेकिन न्याय का मार्ग चरित्र, विवेक और संवेदना से प्रशस्त होता है। जब ज्ञान के साथ सेवा-भाव और नैतिकता जुड़ जाती है, तभी लोकतंत्र मजबूत होता है। विधि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य भी यही हैकृऐसे युवा तैयार करना जो अदालतों में केवल मुकदमे न लड़ें, बल्कि समाज में न्याय, विश्वास और मानवीय मूल्यों की रक्षा के प्रहरी बनकर खड़े हों। यही एक सच्चे विधि विद्यार्थी की पहचान है और यही राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य की सबसे बड़ी आशा भी।

विशिष्ट अतिथियों ने किया मार्गदर्शन

समारोह में पूर्व सांसद श्री राजेंद्र गहलोत, विधि एवं न्याय मंत्री श्री जोगाराम पटेल, इलाहाबाद हाईकोर्ट के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री गोविंद माथुर तथा राजस्थान हाईकोर्ट के न्यायाधीश श्री कुलदीप माथुर ने विद्यार्थियों को कानून के क्षेत्र में उत्कृष्टता, नैतिक मूल्यों और संवैधानिक दायित्वों के साथ कार्य करने का संदेश दिया। नव शिक्षा समाज के अध्यक्ष और सर प्रताप विधि महाविद्यालय के संस्थापक श्री गिरीश माथुर ने संस्थान की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। प्राचार्य डॉ. शंभू सिंह राठौड़ ने अतिथियों का स्वागत किया। कार्यक्रम का संचालन वरिष्ठ उद्घोषक श्री प्रमोद सिंघल ने किया। कार्यक्रम में छात्र-छात्राओं की रंगारंग सांस्कृतिक प्रस्तुतियों ने सभी का मन मोह लिया।

मरीज और डॉक्टर के रिश्ते का संकट

चिकित्सा क्षेत्र में बढ़ते व्यावसायिक दबाव, महंगे इलाज, संवाद की कमी और डॉक्टरों पर बढ़ते तनाव ने मरीज और चिकित्सक के रिश्ते में भरोसे की नींव को कमजोर कर दिया है।

मणिमाला शर्मा,
वरिष्ठ पत्रकार

कहा जाता है कि डॉक्टर भगवान का रूप होते हैं। भारतीय समाज में यह केवल एक कहावत नहीं, बल्कि वर्षों से कायम एक गहरा विश्वास रहा है। ऐसा विश्वास, जिसमें इंसान अपनी जिंदगी सफेद कोट पहने एक अजनबी के हाथों में सौंप देता है। लेकिन आज इसी रिश्ते में दरार दिखाई देने लगी है। अस्पतालों के बाहर प्रदर्शन, इलाज को लेकर विवाद, डॉक्टरों पर हमले और मरीजों की बढ़ती शिकायतें इस बात का संकेत हैं कि डॉक्टर और मरीज के बीच भरोसा कमजोर हुआ है। आखिर ऐसा क्या बदल गया कि जो रिश्ता कभी श्रद्धा और कृतज्ञता पर टिका था, वह अब संदेह, मुकदमों और आरोप-प्रत्यारोप के घेरे में आ गया है?

इस सवाल का जवाब किसी एक पक्ष को दोषी ठहराने में नहीं है। चिकित्सा व्यवस्था के भीतर बढ़ता व्यावसायिक दबाव, मरीजों की बढ़ती अपेक्षाएं, संसाधनों की कमी, कानूनी जोखिम और संवाद के अभाव ने मिलकर इस संकट को जन्म दिया है। चिकित्सा विज्ञान केवल मशीनों, जांचों और दवाओं का नाम नहीं है; इसके केंद्र में भरोसा होता है। जब यही भरोसा टूटने लगता है, तो सबसे आधुनिक चिकित्सा व्यवस्था भी अपना मानवीय स्पर्श खो देती है।

पारदर्शिता की कमी से बढ़ती दूरी

▪ कुछ दशक पहले तक डॉक्टर और मरीज का रिश्ता अधिक व्यक्तिगत हुआ करता था। डॉक्टर केवल बीमारी नहीं देखते थे, बल्कि मरीज के परिवार, उसकी आर्थिक स्थिति और सामाजिक परिस्थितियों से भी परिचित रहते थे। आज चिकित्सा व्यवस्था आधुनिक और तकनीक-आधारित हो गई है, लेकिन इस बदलाव के साथ व्यक्तिगत जुड़ाव पीछे छूटता गया है।

▪ बड़े अस्पतालों में पहुंचने वाला मरीज कई बार खुद को एक व्यक्ति नहीं, बल्कि एक 'केस नंबर' की तरह महसूस करता है। इसकी सबसे बड़ी वजह इलाज की बढ़ती लागत, अस्पष्ट बिल, अनावश्यक जांचों की आशंका और डॉक्टरों से पर्याप्त संवाद का अभाव है। मरीज जानना चाहता है कि उसके इलाज का खर्च क्यों बढ़ रहा है। जब इन सवालों के स्पष्ट जवाब नहीं मिलते, तो संदेह जन्म लेता है।

सेवा और तनाव के बीच संघर्ष

▪ इस संकट का दूसरा पहलू डॉक्टरों की अपनी कठिन परिस्थितियां हैं। चिकित्सा पेशे को सम्मान और प्रतिष्ठा से जोड़कर देखा जाता है, लेकिन इसके पीछे छिपे तनाव को कम ही समझा जाता है। देश में डॉक्टरों पर मरीजों का भारी दबाव है। विशेषकर सरकारी और बड़े अस्पतालों में सीमित संसाधनों के बीच बड़ी संख्या में मरीजों का इलाज करना पड़ता है। कई बार डॉक्टर के पास एक मरीज को सुनने और समझने के लिए कुछ ही मिनट होते हैं। ऐसे में बीमारी की पूरी जानकारी लेना, जांच करना, इलाज समझाना और मरीज को मानसिक भरोसा देना चुनौती बन जाता है।

▪ लगातार लंबी ड्यूटी, नींद की कमी, आपात स्थितियों का दबाव और हर निर्णय के साथ जुड़ी जिम्मेदारी डॉक्टरों को मानसिक थकान की ओर ले जाती है। ऐसे में उनसे हर समय समान धैर्य, संवेदनशीलता और आत्मीय व्यवहार की अपेक्षा करना भी आसान नहीं है।

कॉरपोरेट अस्पताल : सेवा और व्यवसाय के बीच बढ़ती खाई

निजी और कॉरपोरेट अस्पतालों ने स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता और उपलब्धता में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अत्याधुनिक तकनीक, बेहतर सुविधाएं, विशेषज्ञ डॉक्टर और गंभीर बीमारियों के इलाज की उपलब्धता ने लाखों लोगों को नई उम्मीद दी है।

लेकिन इसके साथ स्वास्थ्य क्षेत्र में बढ़ती व्यावसायिक संस्कृति ने कई सवाल भी खड़े किए हैं। आधुनिक मशीनें, प्रशिक्षित स्टाफ, बेहतर सुविधाएं और व्यापक प्रबंधन व्यवस्था भारी निवेश मांगती है। इसका दबाव कई बार डॉक्टरों पर भी दिखाई देता है। कुछ निजी संस्थानों में मरीजों की संख्या, जांचों और प्रक्रियाओं से जुड़े लक्ष्य पूरे करने के दबाव की शिकायतें समय-समय पर सामने आती रही हैं।

जब चिकित्सा व्यवस्था में आर्थिक लक्ष्य प्राथमिकता

बनने लगते हैं, तो मरीज के मन में यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि इलाज उसकी जरूरत के अनुसार हो रहा है या व्यवस्था की अपेक्षाओं के अनुसार।

डर के साये में इलाज... चिकित्सा जगत के सामने एक नई चुनौती रक्षात्मक चिकित्सा (डिफेंसिव मेडिसिन) की है। बढ़ते कानूनी विवादों, उपभोक्ता शिकायतों और हिंसा की घटनाओं के कारण कई डॉक्टर इलाज के साथ-साथ अपनी कानूनी सुरक्षा को भी ध्यान में रखने लगे हैं। इसका असर कई बार मरीजों पर पड़ता है। संभावित जोखिम से बचने के लिए अतिरिक्त जांचें लिखी जाती हैं, अधिक सावधानियां बरती जाती हैं और कई बार इलाज की प्रक्रिया आवश्यकता से अधिक जटिल हो जाती है। इसका आर्थिक बोझ सीधे मरीज पर पड़ता है।

दूसरी ओर, इसका एक गंभीर परिणाम यह भी है कि कुछ डॉक्टर और अस्पताल अत्यधिक जोखिम वाले मरीजों का इलाज करने से बचने लगते हैं। उन्हें आशंका रहती है कि यदि परिणाम अपेक्षा के अनुरूप नहीं रहा, तो पूरी जिम्मेदारी उन्हीं पर डाल दी जाएगी।

सोशल मीडिया और 'गूगल डॉक्टर' का भ्रम

- डिजिटल युग ने स्वास्थ्य संबंधी जानकारी तक लोगों की पहुंच आसान बना दी है, लेकिन इसके साथ भ्रम भी बढ़ा है। आज कई लोग इंटरनेट पर लक्षण खोजकर स्वयं ही बीमारी का अनुमान लगाने और इलाज करने लगते हैं। अधूरी जानकारी के आधार पर वे डॉक्टर की सलाह पर भी संदेह करने लगते हैं।
- वे यह भूल जाते हैं कि हर मरीज का शरीर, परिस्थिति और बीमारी अलग होती है। सोशल मीडिया पर स्वास्थ्य संबंधी अपुष्ट और अधूरी जानकारी की बाढ़ ने डॉक्टरों और मरीजों के बीच अविश्वास की खाई और चौड़ी कर दी है।

मरीज के अधिकार : इलाज में भागीदारी जरूरी

- आज मरीज केवल चुपचाप इलाज करवाने वाला व्यक्ति नहीं है। वह अपनी बीमारी, इलाज और खर्च के बारे में पूरी जानकारी चाहता है। मरीज और उसके परिवार को यह जानने का अधिकार है कि बीमारी क्या है, इलाज की प्रक्रिया क्या होगी, कौन-सी दवाएं दी जा रही हैं और उनके संभावित प्रभाव क्या हो सकते हैं।
- इसी तरह इलाज शुरू होने से पहले अस्पताल का दायित्व है कि वह अनुमानित खर्च की स्पष्ट जानकारी दे। अचानक बढ़ते बिल और अस्पष्ट शुल्क अक्सर विवादों की बड़ी वजह बनते हैं। मरीज को दूसरी चिकित्सकीय राय (सेकंड ओपिनियन) लेने की स्वतंत्रता भी होनी चाहिए।

सम्मान के साथ सुरक्षित माहौल भी जरूरी

- मरीजों के अधिकार जितने महत्वपूर्ण हैं, डॉक्टरों की सुरक्षा भी उतनी ही आवश्यक है। डॉक्टर केवल सुविधाजनक जीवन नहीं जी रहे होते, बल्कि वे सीमित संसाधनों और लगातार बढ़ते दबाव के बीच काम करते हैं।
- किसी मरीज की मृत्यु परिवार के लिए बेहद पीड़ादायक होती है, लेकिन यह समझना भी जरूरी है कि हर मृत्यु डॉक्टर की लापरवाही का परिणाम नहीं होती। कई बार बीमारी की गंभीरता और चिकित्सा विज्ञान की अपनी सीमाएं भी जिम्मेदार होती हैं।
- अस्पतालों में हिंसा, तोड़फोड़ और डॉक्टरों के साथ दुर्व्यवहार का असर केवल चिकित्सकों पर नहीं, बल्कि पूरी स्वास्थ्य व्यवस्था पर पड़ता है। भय के माहौल में काम करने वाला डॉक्टर न तो पूरी निष्ठा से निर्णय ले सकता है और न ही अपना सर्वश्रेष्ठ दे सकता है।

कैसे लौटे डॉक्टर-मरीज के रिश्ते की गर्माहट?

डॉक्टर और मरीज का रिश्ता केवल इलाज और भुगतान का संबंध नहीं है। यह भरोसे, संवेदना और मानवीय जुड़ाव पर आधारित रिश्ता है। यदि यह विश्वास पूरी तरह टूट गया, तो आधुनिक चिकित्सा सुविधाओं के बावजूद समाज ऐसे दौर में पहुंच जाएगा, जहां इलाज तो होगा, लेकिन वह मानसिक सुकून नहीं मिलेगा, जो भरोसे से आता है।

इस रिश्ते को फिर मजबूत बनाने के लिए डॉक्टर, मरीज, अस्पताल प्रबंधन और सरकार—सभी को अपनी भूमिका निभानी होगी। सबसे पहली जरूरत संवाद की है। डॉक्टरों को अपनी व्यस्त दिनचर्या के बीच मरीज और उसके परिवार से संवाद बनाए रखना होगा, क्योंकि कई बार मरीज को केवल दवा नहीं, बल्कि यह भरोसा चाहिए होता है कि उसकी बात सुनी जा रही है।

इलाज की लागत, जांचों की आवश्यकता और अस्पताल की प्रक्रियाओं की स्पष्ट जानकारी मरीज और उसके परिजनों को दी जानी चाहिए। सरकार को सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं को मजबूत बनाना होगा, ताकि डॉक्टरों और अस्पतालों पर बढ़ता दबाव कम हो सके। देश में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों को सशक्त बनाना, डॉक्टरों की संख्या बढ़ाना और सुरक्षित कार्य वातावरण उपलब्ध कराना समय की जरूरत है। वहीं, कॉरपोरेट अस्पतालों के लिए भी संतुलित और प्रभावी नियामक व्यवस्था आवश्यक है, ताकि चिकित्सा सेवा केवल व्यावसायिक लक्ष्य तक सीमित न रह जाए। इसके साथ मरीजों और उनके परिजनों को भी यह समझना होगा कि डॉक्टर विज्ञान और तकनीक की सहायता से जीवन बचाने का प्रयास करते हैं, लेकिन वे चमत्कार नहीं कर सकते। बीमारी, उपचार और जीवन-मृत्यु की अपनी सीमाएं होती हैं। भरोसा तभी लौटेगा, जब दोनों पक्ष एक-दूसरे की परिस्थितियों और सीमाओं को समझेंगे।

चिकित्सा को फिर मानवीय स्पर्श की जरूरत

चिकित्सा का उद्देश्य केवल बीमारी का उपचार करना नहीं, बल्कि पीड़ा को कम करना भी है। आधुनिक मशीनें, अत्याधुनिक तकनीक और नई दवाएं चिकित्सा को अधिक सक्षम बना सकती हैं, लेकिन वे भरोसे और संवेदना का विकल्प नहीं बन सकतीं। मरीज को केवल इलाज नहीं चाहिए; उसे यह विश्वास भी चाहिए कि उसकी बात सुनी जा रही है, उसकी चिंता को समझा जा रहा है और उसके जीवन का मूल्य किसी आंकड़े या बिल से कहीं अधिक है।

इसी तरह डॉक्टरों को भी ऐसा वातावरण चाहिए, जहां वे भय, हिंसा और अनावश्यक दबाव से मुक्त होकर अपने ज्ञान और विवेक के आधार पर निर्णय ले सकें। अस्पतालों को पारदर्शिता और जवाबदेही को अपनी कार्यसंस्कृति का हिस्सा बनाना होगा, जबकि सरकार को ऐसी स्वास्थ्य व्यवस्था विकसित करनी होगी, जिसमें सेवा और गुणवत्ता के साथ मानवीय मूल्य भी सुरक्षित रहें। डॉक्टर और मरीज का रिश्ता कभी लेन-देन का संबंध नहीं था, यह विश्वास का अनुबंध था। इस भरोसे को फिर से मजबूत करना केवल चिकित्सा व्यवस्था की जरूरत नहीं, बल्कि समाज की भी आवश्यकता है। क्योंकि अंततः चिकित्सा की सबसे बड़ी ताकत न मशीनें हैं, न दवाएं और न ही इमारतें। उसकी सबसे बड़ी शक्ति वह विश्वास है, जो एक मरीज को यह भरोसा देता है कि उसकी जिंदगी सुरक्षित हाथों में है। जिस दिन यह भरोसा लौट आएगा, उसी दिन चिकित्सा व्यवस्था भी अपने सबसे मानवीय स्वरूप में लौट आएगी।

स्वस्थ नागरिक हों विकास की पहचान

यदि अस्पतालों की संख्या बढ़ना विकास का पैमाना बन जाए, तो आत्ममंथन जरूरी है। स्वस्थ भारत का सपना तभी साकार होगा, जब नीति का केंद्र इलाज नहीं, बल्कि नागरिकों का स्वास्थ्य होगा।

बलवंत राज मेहता,
वरिष्ठ पत्रकार

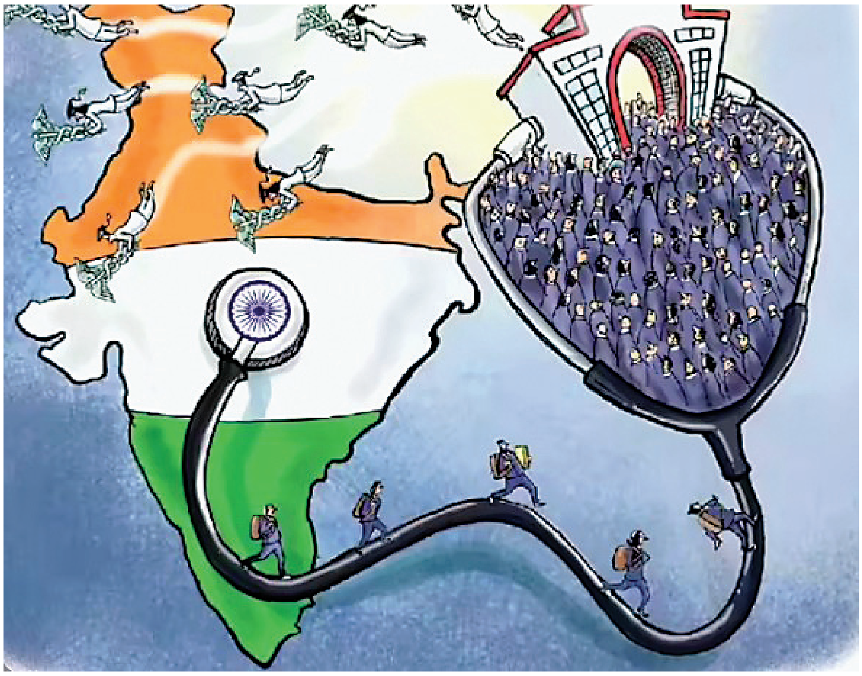

सुबह की सैर पर निकलिए। पार्क में एक ओर योग कर रहे लोग दिखेंगे, दूसरी ओर मधुमेह, उच्च रक्तचाप और हृदय रोग की दवाइयों पर चर्चा करते बुजुर्ग। अस्पतालों के बाहर लंबी कतारें हैं, दवा बाजार निरंतर बढ़ रहा है, स्वास्थ्य बीमा का कारोबार नए कीर्तिमान बना रहा है, फिर भी भारत पहले से अधिक बीमार क्यों दिखाई देता है? यह प्रश्न केवल चिकित्सा व्यवस्था का नहीं, बल्कि हमारी जीवनशैली, भोजन, शहरों और सरकारी नीतियों का भी है।

स्वास्थ्य का अर्थ केवल अस्पताल, डॉक्टर और दवा नहीं है। स्वास्थ्य की शुरुआत घर की रसोई से होती है, विद्यालय के खेल मैदान से होती है, शहर के पार्क और पैदल मार्ग से होती है और परिवार की दिनचर्या से होती है। दुर्भाग्य से हमने स्वास्थ्य को जीवनशैली का विषय नहीं, बल्कि बीमारी का विषय बना दिया है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के अनुसार विश्व में होने वाली लगभग 74 प्रतिशत मौतें असंक्रामक रोगों जैसे हृदय रोग, मधुमेह, कैंसर और श्वसन रोग के कारण होती हैं। भारत भी इसी चुनौती का सामना कर रहा है। भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) के अध्ययन के अनुसार देश के लगभग 11.4 प्रतिशत वयस्क मधुमेह, 35.5 प्रतिशत उच्च रक्तचाप और लगभग हर तीसरा वयस्क अधिक वजन या मोटापे की समस्या से जूझ रहा है। दूसरी ओर राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस-5) बताता है कि भारत में अभी भी लाखों बच्चे कुपोषित हैं। अर्थात एक ही देश में भूख भी है और मोटापा भी। यह विरोधाभास हमारी विकास यात्रा का सबसे बड़ा प्रश्न है।

विडंबना देखिए कि जितना खर्च इलाज पर बढ़ रहा है, उतना निवेश बीमारी रोकने पर नहीं हो रहा। चिकित्सा उद्योग, औषधि उद्योग और स्वास्थ्य बीमा का विस्तार आवश्यक है, लेकिन यदि किसी समाज की पहचान अस्पतालों की बढ़ती संख्या से होने लगे, तो यह चेतावनी है, उपलब्धि नहीं।

भोजन बदला, बीमारियां भी बदल गईं

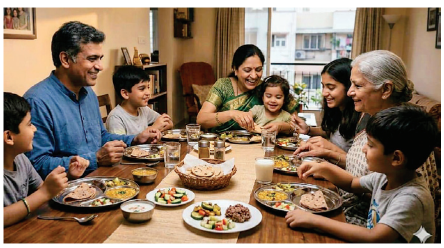

- कुछ दशक पहले भारतीय थाली में बाजरा, ज्वार, दाल, छाछ, मौसमी सब्जियां और मोटा अनाज प्रमुख था। आज उसकी जगह अत्यधिक प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ, मीठे पेय, अधिक नमक और हानिकारक वसा वाले खाद्य पदार्थों ने ले ली है। परिणाम सामने है मधुमेह और मोटापा अब सम्पन्नता के नहीं, सामान्य परिवारों के रोग बन चुके हैं।
- आईसीएमआर के नवीन आहार दिशानिर्देश स्पष्ट कहते हैं कि भोजन में साबुत अनाज, दालें, हरी सब्जियां, मौसमी फल और सीमित मात्रा में चीनी, नमक तथा तेल होना चाहिए। यह आधुनिक विज्ञान भी वही कह रहा है जो भारतीय रसोई सदियों से जानती थी।

श्रीअन्न : भविष्य की थाली

संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 2023 को अंतरराष्ट्रीय मोटा अनाज वर्ष घोषित कर भारत की पारंपरिक खाद्य संस्कृति को वैश्विक सम्मान दिया। बाजरा, ज्वार और रागी जैसे श्री अन्न केवल किसानों की फसल नहीं, बल्कि भविष्य की स्वास्थ्य सुरक्षा हैं। इनमें रेशेदार तत्व, लौह, कैल्शियम और सूक्ष्म पोषक तत्व अधिक हैं तथा ये रक्त शर्करा को नियंत्रित रखने में सहायक माने जाते हैं।

योग : दुनिया अपना रही, हम भूल रहे

आज 190 से अधिक देशों में योग का अभ्यास हो रहा है, जबकि भारत में इसे अक्सर केवल एक दिवस के आयोजन तक सीमित कर दिया जाता है। यदि प्रत्येक विद्यालय, कार्यालय और उद्योग में प्रतिदिन 20 मिनट योग अनिवार्य हो जाए, तो भविष्य में लाखों लोगों को जीवनशैली संबंधी रोगों से बचाया जा सकता है।

मानसिक स्वास्थ्य भी उतना ही महत्वपूर्ण

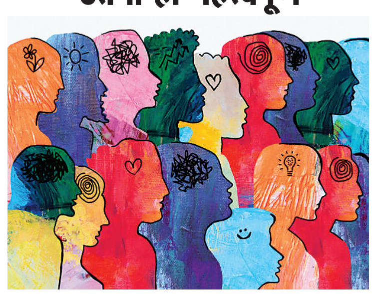

विश्व स्वास्थ्य संगठन चेतावनी दे चुका है कि अवसाद आने वाले वर्षों में कार्यक्षमता घटाने वाले प्रमुख कारणों में रहेगा। भारत में भी तनाव, अकेलापन, डिजिटल निर्भरता और प्रतिस्पर्धा मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहे हैं। स्वस्थ भारत केवल स्वस्थ शरीर से नहीं, बल्कि स्वस्थ मन से बनेगा।

परम्परा से मेडिकल टूरिज्म तक

आयुर्वेद अब केवल घरेलू उपचार नहीं रहा। वैज्ञानिक शोध, आधुनिक तकनीक, औषधीय खेती और मेडिकल टूरिज्म के सहारे भारत की यह प्राचीन चिकित्सा प्रणाली वैश्विक पहचान बना रही है।

केस 1 : जयपुर के एक 48 वर्षीय व्यवसायी लंबे समय से मधुमेह, मोटापे और उच्च रक्तचाप से जूझ रहे थे। नियमित एलोपैथिक उपचार के साथ उन्होंने विशेषज्ञ की सलाह पर आयुर्वेदिक आहार, योग, पंचकर्म और जीवनशैली में बदलाव अपनाया। कुछ महीनों में उनके वजन, तनाव और रक्त शर्करा नियंत्रण में सकारात्मक सुधार देखा गया। विशेषज्ञों कहते हैं, ऐसे मामलों में आयुर्वेद सहायक भूमिका निभा सकता है, लेकिन उपचार योग्य चिकित्सक की निगरानी में हो।

केस 2 : राजस्थान के कई जिलों में किसान अब पारंपरिक फसलों के साथ अश्वगंधा, शतावरी, एलोवेरा और अन्य औषधीय पौधों की खेती की ओर बढ़ रहे हैं। उचित प्रशिक्षण और बाजार मिलने पर यह खेती किसानों की आय बढ़ाने के साथ आयुर्वेदिक उद्योग को गुणवत्तापूर्ण कच्चा माल भी उपलब्ध करा सकती है।

डॉ. मधु बैनर्जी,
पत्रकार एवं लेखिका

कभी घर के आंगन की तुलसी, दादी नानी के नुस्खों और नाडी परीक्षा तक सीमित समझा जाने वाला आयुर्वेद आज तेजी से बदल रहा है। अब यह केवल पारंपरिक उपचार पद्धति नहीं, बल्कि आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था, वैज्ञानिक शोध, चिकित्सा शिक्षा, मेडिकल टूरिज्म, औषधीय पौधों की खेती और वैश्विक स्वास्थ्य नीति का हिस्सा बन चुका है।

बदलती जीवनशैली के कारण दुनिया मानसिक तनाव, मोटापा, मधुमेह, उच्च रक्तचाप और अनिद्रा जैसी बीमारियों से जूझ रही है। ऐसे समय में भारत की हजारों वर्ष पुरानी चिकित्सा परंपरा को आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ आगे बढ़ाने के प्रयास तेज हुए हैं। आयुर्वेद का मूल सिद्धांत है, 'स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं, आतुरस्य विकार प्रशमनम्', अर्थात स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना और रोगी के रोग का उपचार करना। यही समग्र सोच आज दुनिया की स्वास्थ्य नीतियों में भी प्रमुखता से दिखाई दे रही है। कोविड 19 महामारी के बाद प्रतिरक्षा क्षमता, जीवनशैली आधारित रोगों की रोकथाम और प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति लोगों का विश्वास बढ़ा है। इसका सबसे बड़ा लाभ आयुर्वेद को मिला।

भारत सरकार और आयुष मंत्रालय अब आयुर्वेद को केवल परंपरा नहीं, बल्कि वैज्ञानिक प्रमाणों पर आधारित चिकित्सा प्रणाली के रूप में स्थापित करने की दिशा में काम कर रहे हैं। जयपुर का राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान और जोधपुर स्थित डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय शिक्षा, शोध और पंचकर्म चिकित्सा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

मिलावट : धीमा ज़हर

दूध, घी, मसाले, तेल और मिठाइयों में मिलावट की घटनाएं समय-समय पर सामने आती रहती हैं। भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) का 'ईट राइट इंडिया' अभियान महत्वपूर्ण पहल है, लेकिन जब तक खाद्य अपराधों पर कठोर दंड, नियमित जांच और उपभोक्ता जागरूकता नहीं बढ़ेगी, तब तक शुद्ध भोजन सुनिश्चित नहीं होगा।

स्वस्थ शहर, स्वस्थ नागरिक

भारत के अधिकांश शहर वाहन-केंद्रित हो गए हैं। फुटपाथ गायब हैं, साइकिल पथ नहीं हैं और बच्चों के खेल मैदान सिकुड़ रहे हैं। यदि शहर चलने लायक नहीं होंगे, तो अस्पताल भरते रहेंगे। नगर नियोजन में पार्क, पैदल मार्ग, साइकिल ट्रैक और हरित क्षेत्र को स्वास्थ्य अवसंरचना का हिस्सा मानना होगा।

बीमारी की अर्थव्यवस्था या स्वास्थ्य की संस्कृति?

भारत में दवा उद्योग, अस्पताल, जांच प्रयोगशालाएं और स्वास्थ्य बीमा का बाजार लगातार बढ़ रहा है। यह आर्थिक गतिविधि का संकेत अवश्य है, लेकिन किसी राष्ट्र की सफलता का पैमाना यह नहीं हो सकता कि उसने कितने अस्पताल बनाए। वास्तविक उपलब्धि तब होगी, जब अस्पतालों की भीड़ कम होने लगे। सरकार की हर नीति कृषि, शिक्षा, शहरी विकास, खाद्य सुरक्षा, खेल और पर्यावरण का पहला प्रश्न होना चाहिए कि क्या इससे नागरिक अधिक स्वस्थ होंगे?

भारत को चिकित्सा महाशक्ति बनने से पहले स्वास्थ्य महाशक्ति बनने का लक्ष्य निर्धारित करना होगा। इसके लिए अस्पतालों से अधिक निवेश रोकथाम आधारित स्वास्थ्य व्यवस्था में करना होगा। शुद्ध भोजन, पोषण, योग, खेल, मानसिक स्वास्थ्य, स्वच्छ पर्यावरण, आयुष पद्धतियों के समन्वित उपयोग और व्यापक जनजागरूकता को राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में लाना होगा।

किसी राष्ट्र की समृद्धि उसके अस्पतालों की ऊंची इमारतों से नहीं, बल्कि वहां रहने वाले स्वस्थ, सक्रिय और प्रसन्न नागरिकों से मापी जाती है। जिस दिन भारत इलाज केंद्रित सोच से आगे बढ़कर स्वास्थ्य केंद्रित संस्कृति को अपनाएगा, उसी दिन विकसित भारत की मजबूत नींव रखी जाएगी। स्वस्थ भारत का मार्ग ऑपरेशन थिएटर से नहीं, बल्कि रसोई, खेत, विद्यालय, खेल मैदान, स्वच्छ वातावरण और अनुशासित जीवनशैली से होकर गुजरता है। यही भविष्य के भारत की सबसे बड़ी पहचान होनी चाहिए।

बदल रही है आयुर्वेद की तस्वीर

एक समय था जब आयुर्वेद को केवल घरेलू उपचार माना जाता था और वैज्ञानिक समुदाय का एक वर्ग इसे पर्याप्त शोध के अभाव में संदेह की नजर से देखता था। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में स्थिति तेजी से बदली है। अब आयुर्वेदिक औषधियों के मानकीकरण, क्लीनिकल रिसर्च और वैज्ञानिक परीक्षण पर विशेष जोर दिया जा रहा है। देश के विभिन्न संस्थानों में मधुमेह, गठिया, मोटापा, तनाव, माइग्रेन, लीवर रोग, त्वचा रोग और कैंसर के सहायक उपचार जैसे विषयों पर अध्ययन चल रहे हैं। आयुर्वेद की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह केवल रोग के उपचार पर नहीं, बल्कि रोग की रोकथाम और स्वस्थ जीवनशैली पर भी समान रूप से जोर देता है।

आधुनिक विज्ञान के साथ कदमताल

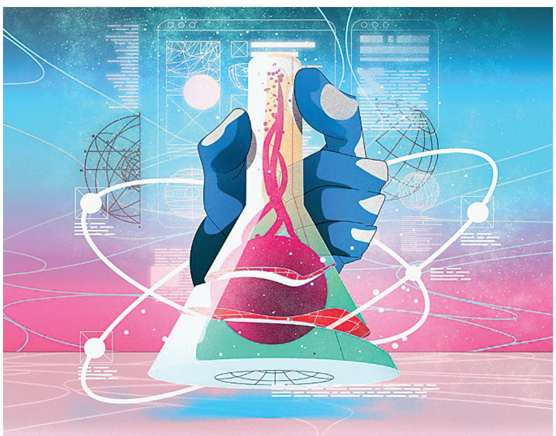

आज आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा को प्रतिस्पर्धी नहीं, बल्कि पूरक माना जा रहा है। कई अस्पतालों में एलोपैथी के साथ आयुर्वेद, योग, पोषण और मानसिक स्वास्थ्य परामर्श का समन्वित मॉडल अपनाया जा रहा है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, डिजिटल हेल्थ रिकॉर्ड, बायोटेक्नोलॉजी और डेटा विश्लेषण जैसी तकनीकें आयुर्वेदिक शोध को नई दिशा दे रही हैं। इनके माध्यम से उपचार के परिणामों और दवाओं की प्रभावशीलता का अधिक व्यवस्थित मूल्यांकन संभव हो रहा है।

राजस्थान में नई संभावनाएं

राज्य में बड़ी संख्या में आयुर्वेदिक चिकित्सालय, औषधालय और पंचकर्म केंद्र संचालित हो रहे हैं। यहां औषधीय पौधों के संरक्षण, गुणवत्तापूर्ण औषधि निर्माण और शोध पर लगातार काम हो रहा है। पंचकर्म भी अब केवल पारंपरिक चिकित्सा नहीं रह गया है। तनाव, मोटापा, मांसपेशियों के दर्द और जीवनशैली संबंधी समस्याओं से राहत पाने के लिए देश-विदेश से लोग इसकी ओर आकर्षित हो रहे हैं। इससे जयपुर, जोधपुर, उदयपुर और माउंट आबू जैसे शहर भविष्य में आयुर्वेदिक वेलनेस हब के रूप में विकसित हो सकते हैं।

नई पीढ़ी का बढ़ता भरोसा... आज का युवा केवल बीमारी का इलाज नहीं, बल्कि स्वस्थ जीवन जीने के तरीके तलाश रहा है। संतुलित आहार, योग, ध्यान और प्राकृतिक जीवनशैली के प्रति उसकी रुचि बढ़ी है। यही कारण है कि आयुर्वेद अब नई पीढ़ी के बीच भी पहले की तुलना में अधिक स्वीकार्य हो रहा है।

एविडेंस बेस्ड आयुर्वेद की ओर

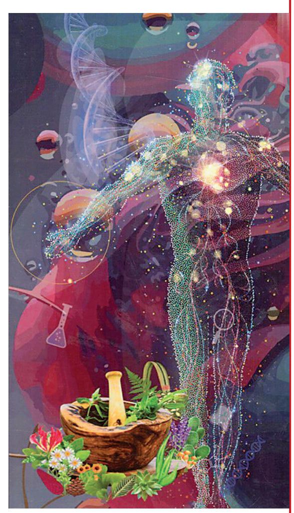

आयुष मंत्रालय वैज्ञानिक शोध, औषधियों के मानकीकरण, डिजिटल हेल्थ और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा दे रहा है। मधुमेह, गठिया, लीवर रोग, मानसिक स्वास्थ्य, महिलाओं के स्वास्थ्य और बुजुर्गों की चिकित्सा जैसे विषयों पर व्यापक अध्ययन किए जा रहे हैं। साथ ही आयुर्वेदिक दवाओं की गुणवत्ता, सुरक्षा और प्रभावशीलता को आधुनिक वैज्ञानिक मानकों पर परखा जा रहा है। फार्माकोविजिलेंस, क्लीनिकल ट्रायल और डिजिटल डेटा विश्लेषण जैसी व्यवस्थाएं आयुर्वेद को अधिक विश्वसनीय बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं।

दुनिया भर में अश्वगंधा, गिलोय, तुलसी, शतावरी, आंवला और ब्राह्मी जैसे औषधीय पौधों की मांग भी तेजी से बढ़ रही है। राजस्थान की जलवायु इनके उत्पादन के लिए अनुकूल मानी जाती है। यदि किसानों को वैज्ञानिक प्रशिक्षण और बेहतर बाजार उपलब्ध हो, तो औषधीय खेती ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नई मजबूती दे सकती है।

आयुर्वेद की सबसे बड़ी शक्ति इसकी समग्र सोच है। परंपरा और आधुनिक विज्ञान का संतुलित समन्वय ही इसे भविष्य की स्वास्थ्य व्यवस्था में और मजबूत स्थान दिला सकता है। विशेषज्ञ भी मानते हैं कि वैज्ञानिक शोध, प्रमाण आधारित चिकित्सा और गुणवत्ता मानकों के साथ आगे बढ़ने पर आयुर्वेद न केवल भारत, बल्कि पूरी दुनिया के लिए एक भरोसेमंद स्वास्थ्य विकल्प बन सकता है।

गड्ढों का स्मार्ट सिटी मॉडल

बलवंत राज मेहता,
वरिष्ठ व्यंग्यकार

जयपुर की टोंक रोड पर सड़क धंस गई। बरसात ने फिर साबित कर दिया कि हमारे यहां सड़कें डामर से नहीं, भरोसे से बनती हैं। पहली बारिश आते ही सड़क ने धरती माता की गोद में समर्पण कर दिया। लगता है ठेकेदार ने सड़क नहीं, सरप्राइज पैकेज बनाया था। कब कौन-सा हिस्सा नीचे चला जाए, कोई नहीं जानता। अब गड्ढा भी साधारण नहीं रहा, वह विकास का प्रतीक है। जितना बड़ा गड्ढा, उतना बड़ा बजट और उतनी ही बड़ी मरम्मत। जनता हर साल टैक्स देती है, सरकार हर साल सड़क बनवाती है और बारिश हर साल गुणवत्ता की जांच मुफ्त में कर देती है। सुझाव है कि अगली बार सड़क के उद्घाटन पर फीता काटने की जगह लाइफ जैकेट बांटी जाए। आखिर स्मार्ट सिटी में सड़क पर चलना भी अब साहसिक पर्यटन जैसा अनुभव बन चुका है। यहां मंजिल तक पहुंचना नहीं, बीच रास्ते धंसने से बचना ही सबसे बड़ी उपलब्धि है।

खेजड़ी इन दिनों सियासत के कटघरे में

मरुस्थल की बूढ़ी खेजड़ी इन दिनों सियासत के कटघरे में खड़ी है। अपराध बस इतना है कि वह पेड़ है। उसकी जड़ें मिट्टी में हैं, लेकिन उसकी शाखाओं पर राजनीति ने अपना झंडा टांग दिया है। कल तक जिन्हें पेड़-पौधों का अंतर नहीं मालूम था, वे आज पत्तियों से राजनीति और टहनियों से तर्क निकाल रहे हैं। लगता है मानो राजस्थान की सारी समस्याएं किसी खेजड़ी की डाल पर बैठी हों। खेजड़ी मुस्कुरा रही है। उसे याद है, कभी लोग उसे बचाने के लिए अपने सिर कटवा देते थे; आज उसके नाम पर एक-दूसरे का सिर खाने को तैयार हैं। पहले कुल्हाड़ी तने पर चलती थी, अब जुबानें चलती हैं। फर्क केवल औज़ार का है। बेचारी खेजड़ी शायद यही कहना चाहती है मेरे नाम पर बहस मत करो, मेरे जैसे पेड़ बचाओ।

पाठ्यपुस्तक में जगह, संविधान में इंतज़ार

आज़ादी के इतने वर्षों बाद भी राजस्थानी भाषा का भाग्य किसी सरकारी फाइल जैसा है चलती बहुत है, पहुंचती कहीं नहीं। स्कूलों में राजस्थानी पढ़ाई जा रही है, बच्चे म्हारो और थारो सीख रहे हैं, लेकिन संविधान की आठवीं अनुसूची के दरवाज़े अब भी उसके लिए बंद हैं। अजीब विडंबना है। सरकार कहती है, पढ़ो भी, पढ़ाओ भी, लेकिन जब भाषा सम्मान की कुर्सी मांगती है तो जवाब मिलता है, मामला विचाराधीन है। लगता है राजस्थानी का सबसे बड़ा अपराध यही है कि वह सदियों से जीवित है, इसलिए उसे जीवित रहने का प्रमाण-पत्र बार-बार देना पड़ता है। हर चुनाव में भाषा के नाम पर वादों की पगड़ी बांधी जाती है और चुनाव बाद वही पगड़ी किसी फाइल पर धूल झाड़ने के काम आ जाती है। राजस्थानी आज भी मुस्कराकर पूछ रही है मान्यता कद मिलसी?

अपने घर में बेगानी राजस्थानी

लोकभवन से फरमान आया है कि राजस्थान के विश्वविद्यालयों में अब मराठी पढ़ाई जाएगी। निर्णय अच्छा है, भारतीय भाषाओं का सम्मान होना ही चाहिए। लेकिन ज़रा यह भी बता दीजिए कि राजस्थानी भाषा का नंबर किस जन्म में आएगा? विडंबना देखिए राजस्थान की धरती पर राजस्थानी आज भी अपने ही घर में किराएदार बनी हुई है। विश्वविद्यालयों में उसके लिए स्थायी ठिकाना नहीं, लेकिन बाहर की भाषाओं के स्वागत में कालीन बिछाए जा रहे हैं। लगता है नीति यह बन गई है कि घर की मुर्गी दाल बराबर, पड़ोसी की भाषा मालामाल। मराठी का सम्मान कीजिए, अवश्य कीजिए। लेकिन क्या यह पूछना गुनाह है कि जिस भाषा में पाबूजी, ढोला-मारू, मीरा, दुरसा आढ़ा और अनगिनत लोककाव्य जन्मे, उसे अपने ही प्रदेश में सम्मान दिलाने की फुर्सत किसे नहीं मिली? डर इस बात का है कि कहीं आने वाले समय में राजस्थान का छात्र मराठी तो धाराप्रवाह पढ़ ले, लेकिन अपनी दादी की राजस्थानी सुनकर शब्दकोश खोजने लगे। तब शायद सरकार एक और केंद्र खोले राजस्थान में राजस्थानी समझो अभियान!

कढ़ाई में तेल, सिर पर कानून

पहले शादी में हलवाई कढ़ाई संभालता था, अब लगता है उसे आधा समय फाइलें और रजिस्टर संभालने में लगेगा। सरकार को अब यह भी जानना है कि कितने मेहमान आए, कितनी पूड़ियां तली गईं और कढ़ाई में तेल ज़्यादा था या नियम। ऐसा लगता है कि अगला आदेश यह होगा कि हर गुलाबजामुन का जन्म प्रमाणपत्र और हर जलेबी का आधार नंबर भी बनाया जाए। बारात के आगे बैंड नहीं, निरीक्षण दल चलेगा और फेरों से पहले फॉर्म भरवाए जाएंगे। भोजन की शुद्धता पर सख्ती ज़रूरी है, लेकिन सवाल यह है कि मिलावटखोर फैक्ट्रियों और नकली घी बेचने वालों पर जितनी मुस्तैदी दिखनी चाहिए, उतनी दिखती क्यों नहीं? आसान निशाना फिर वही हलवाई बन गया, जो शादी वाले दिन सबसे ज़्यादा पसीना बहाता है। अब शादी का नया मुहावरा होगा दूल्हा बाद में आएगा, पहले निरीक्षक और रजिस्टर पधारेंगे।

जीआई की दौड़ में जूती आगे

राजस्थान की जूती ने आखिर जीआई टैग की मंज़िल पा ली। यानी अब वह सिर्फ़ पैरों की शोभा नहीं, अंतरराष्ट्रीय पहचान भी बन गई। उधर राजस्थान के दूसरे पारंपरिक उत्पाद अभी भी सरकारी फाइलों की मैराथन दौड़ रहे हैं। लगता है यहां उत्पाद पहले बनता है, पहचान बाद में और कागज़ सबसे आखिर में। विडंबना देखिए, सदियों से दुनिया को स्वाद देने वाला जीरा, शान बढ़ाने वाला साफा और अनेक हस्तशिल्प अब भी कतार में खड़े हैं। जैसे रेलवे की वेटिंग लिस्ट हो कन्फर्म होने का भरोसा नहीं, उम्मीद पूरी। जीआई टैग की असली रेस बाजार में नहीं, दफ्तरों में जीतनी पड़ती है। जो फाइल तेज दौड़ गई, वही वैश्विक ब्रांड बन गई। बाकी कारीगर अपने हुनर से कम और आवेदन की प्रगति से ज़्यादा परिचित हो गए हैं। उम्मीद है अगली बार राजस्थान के उत्पाद कतार में नहीं, पहचान की दौड़ में सबसे आगे दिखाई देंगे।

आस्था कोई ऐप नहीं कि जरूरत पर डाउनलोड और माहौल बदला तो अनइंस्टॉल

रामलला के नए-नवेले रिश्तेदार!

हरीश मलिक,
वरिष्ठ व्यंग्यकार और लेखक

हमारे गांवों में एक आम कहावत प्रचलित है- 'जब गुड़ बंटता है, तब रिश्तेदारों की संख्या अचानक बढ़ जाती है।'

राम मंदिर के साथ भी कुछ वैसा ही हुआ। मंदिर बन गया तो रिश्तेदार बढ़ गए। चढ़ावा आया तो चोर और शुभचिंतक दोनों बढ़ गए। चोरी हुई तो संरक्षक बढ़ गए। परंतु राजनीति बड़ी विलक्षण और सयानी है। वहां बिवाई फटे न फटे, पराई पीर अवश्य प्रकट हो जाती है। बस, सियासी अवसर का घी मिलना चाहिए। पहले जिनकी श्रद्धा छुट्टी पर थी, आज वही आस्था के महालेखाकार बने घूम रहे हैं। कुछ महाशयों की भक्ति ऐसी फूटी कि मानो वे जन्म-जन्मांतर से रामलला के कोषाध्यक्ष रहे हों।

अब हर कोई ऐसे बोल रहा है जैसे रामलला ने अपने मंदिर की दूसरी चाबी इन्हीं के पास रख छोड़ी हो। वे पहले तो राम लला अस्तित्व पर सवाल उठाते थे। रामभक्तों को अयोध्या आने से रोकते थे। अब वे उनकी चौखट पर आंसुओं की बाल्टी लेकर खड़े हैं। दरअसल, राजनीति में संवेदना भी बड़ी हिसाबी चीज होती है। जहां वोट दिखाई देते हैं, वहां आंखें अपने-आप नम हो जाती हैं।

राजनीति का यह नया चमत्कार देखने लायक है। कल तक जिन्हें मंदिर का रास्ता लंबा लगता था, आज गर्भगृह तक उनकी भावनाएं दौड़ी चली आ रही हैं। संवेदना का ज्वार उमड़ पड़ा है। लगता है जैसे भक्ति कोई साधना नहीं, मोबाइल ऐप हो कि जरूरत पड़ी, डाउनलोड कर लिया। माहौल बदला, अनइंस्टॉल कर दिया। दरअसल, इनकी श्रद्धा पंचांग देखकर नहीं, चुनावी कैलेंडर देखकर जागती है। सावन, भादो, चैत्र या कार्तिक से इसका कोई संबंध नहीं। इसका मौसम सियासी गुणा-भाग, चुनावी चकल्लस और मुद्दे देखकर तय होता है।

अयोध्या में चढ़ावे की चोरी क्या हुई, अचानक देश में रामलला के ऐसे-ऐसे रिश्तेदार प्रकट हो गए कि मां सीताजी भी सोच रहीं होंगी कि ये लोग प्रभु के वनवास (टैंट का प्रवास) के समय कहां थे? तब इनकी आस्था अस्ताचलगामिनी थी। जब मंदिर बन रहा था, तब इनकी श्रद्धा ट्रैफिक जाम में फंसी थी। जब प्राण प्रतिष्ठा हुई, तब इन्हें अचानक लोकतंत्र, संविधान, धर्मनिरपेक्षता और नानी-दादी सब एक साथ याद आ गए थे।

अपने रामलला की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे मर्यादा पुरुषोत्तम हैं और किसी से भी नाराज नहीं होते। शबरी के जूठे बेर भी खा लेते हैं और निषादराज को गले भी लगा लेते हैं। क्योंकि वे मन की थाली देखते हैं, बयान की बाजी नहीं। यही वजह है कि वे अब भी गर्भगृह में मंद-मंद मुस्कुरा रहे हैं। यहां राम दरबार लगा है और प्रभु राम मुस्कान के बीच क्रोधित लक्ष्मण कह रहे हैं...

'भैया, देखो! जिनके कदम पहले मंदिर की दहलीज तक नहीं पहुंचे, उनकी भावनाएं आज सीधे गर्भगृह तक पहुंच गई हैं।'

'कल तक जिन्हें आपका नाम लेने में राजनीतिक बुखार चढ़ जाता था, आज वही आपकी संपत्ति के स्वयंभू मुनीम बने बैठे हैं।'

राम अपने चित-परिचित शांत स्वर में कहते हैं..

'प्रिय लक्ष्मण, रहने दो। यह कलियुग है। सबकी अपनी-अपनी श्रद्धा और आस्था है। कुछ भक्त सर्वस्व समर्पण भाव से आते हैं। उनके लिए आस्था से बढ़कर कुछ भी नहीं। और कुछ लोग ऐसे भी हैं जो चौखट पर आरती की थाली नहीं, माइक लेकर आते हैं। इनके अधरों पर आरती के बोल नहीं, बयान ज्यादा आते हैं।'

इसी बीच पवनपुत्र बोल उठे...

'प्रभु, आप ठीक कहते हैं। कुछ नेता लोग दर्शन करने नहीं आए... बल्कि दर्शन देने के भाव से आते हैं। अगले साल चुनाव हैं, सो शक्ल दिखलाने आते हैं।'

'इन्होंने आस्था को अवसर, श्रद्धा को रणनीति और भगवान को प्रेस कॉन्फ्रेंस का प्रॉप बना दिया है।'

इसमें कोई दो राय नहीं कि राम मंदिर में चढ़ावा चोरी निश्चय ही महापाप है। जिन विधर्मियों ने भी भगवान के दानपात्र पर हाथ डाला, उसने केवल चढ़ावा नहीं चुराया, करोड़ों श्रद्धालुओं की आस्था को ठेस पहुंचाई है। रामजी उनको कठोरतम दंड दें। यही न्याय है। रामायण हमें यह नहीं सिखाती कि हर घटना पर शोर मचाओ। वह यह सिखाती है कि अन्याय का प्रतिकार करो, अपराधी को दंड दो और मर्यादा बनाए रखो। इसलिए चढ़ावे चोरी के घोर अपराध का दोषी चाहे कोई भी हो, उसे कठोरतम दंड मिलना ही चाहिए।

लेकिन कुछ सियासी लोगों यह कतई मंजूर नहीं कि चोरी की जांच पुलिस करे, न्यायालय फैसला दे और मुद्दा खत्म हो जाए। उनको तो सीधे धर्म का ठेकेदार खुद बनना है। क्योंकि इन्हें आस्था का दुःख कम, सुर्खियों का सुख ज्यादा दिखाई देता है। इसलिए अगर भक्ति भी मौसम को देखकर आने लगे, तो समझ लीजिए कि चोर मंदिर में नहीं, जमीर में घुस आया है।

राम लला पर दोष मढ़ना बंद कीजिए...

? **चलते-चलते** : एक सवाल कि आपके अपने घर पर चोरी होती है तो आप चोर को जिम्मेदार ठहराते हैं या घर को? अरे इतना भी नहीं पता... दोषी तो चोर ही होगा ना। तब कृपया आप राम लला या राम मंदिर पर दोष मढ़ना बंद कीजिए!

AYUSHI
BUILDCON PVT. LTD.

AYUSHI
BUILDERS & DEVELOPERS

221-222, Shyam Nagar, Pal Link Road, Jodhpur - 342 003 (Raj.)
Tel. : 0291-2710071 Mobile : 94141 27593, 93147 11416
E-mail : mdsharma74@live.in

क्या कमजोर होने लगी है मोदी-शाह की पकड़?

भाजपा में ये क्या हो रहा है...?

सुरेश व्यास
वरिष्ठ पत्रकार

तीसरे कार्यकाल में भाजपा को अपने दम पर पूर्ण बहुमत नहीं मिलने के बाद हालात बदले हुए हैं। पहले भी सहयोगी दल थे, लेकिन उनका दबाव इतना नहीं था। अब परिस्थितियां बदल चुकी हैं। अपने सांसदों के साथ-साथ सहयोगी दलों को भी संतुष्ट रखना जरूरी हो गया है। इसलिए मोदी-शाह अब फूंक-फूंककर कदम रख रहे हैं।

देश की राजनीति को बदलकर रख देने वाली भारतीय जनता पार्टी में क्या इन दिनों सब कुछ ठीक नहीं चल रहा है? क्या भाजपा चुनावी राजनीति में अपना दबदबा बनाए रखने के लिए अपनी मूल विचारधारा को भी पीछे छोड़ देना चाहती है? क्या भाजपा अब पहले जैसी आंतरिक लोकतंत्र वाली पार्टी नहीं रह गई है? क्या अब पार्टी में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह के इशारों पर ही सब कुछ तय होता है?

ये सवाल आम तौर पर हर मोदी-शाह विरोधी के मन में उठ सकते हैं, लेकिन पिछले कुछ समय में ऐसे कई सियासी घटनाक्रम भी हुए हैं कि भाजपा के जन्म से पहले, यानी जनसंघ के दौर से पार्टी से जुड़े अनेक लोग भी शायद इन्हीं सवालों को अपने आसपास मंडराता हुआ महसूस करने लगे हैं। इनमें से कई लोग दबी जुबान में कहते हैं कि आज की भाजपा में न तो डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी की विचारधारा बची है और न ही पंडित दीनदयाल उपाध्याय का दर्शन। यह भाजपा अटल-आडवाणी के दौर वाली भाजपा भी नहीं रही, जहां विचारधारा से जुड़े लोगों की अलग पहचान और पूछ होती थी।

हालांकि ये बातें लोग दबी जुबान में ही कहते हैं, लेकिन पिछले 12 वर्षों में ऐसे बहुत कम मौके आए होंगे, जब किसी भाजपा नेता ने पार्टी के मौजूदा हालात पर खुलकर टिप्पणी की हो। पार्टी के अधिकांश वरिष्ठ और संस्थापक नेताओं को या तो मार्गदर्शक मंडल में भेज दिया गया या फिर वे सक्रिय राजनीति के हाशिए पर चले गए। मार्गदर्शक मंडल से अब शायद ही कोई मार्गदर्शन लिया जाता हो। पिछले ढाई-तीन वर्षों में विभिन्न राज्यों के प्रभावशाली नेताओं को दरकिनार कर नए चेहरों को स्थापित करने की नीति भी इसी ओर संकेत करती है।

अब हालात शायद कुछ बदलने लगे हैं। भाजपा के भीतर भी अब 'आए हुए' और 'जन्मजात भाजपाई' के बीच फर्क की चर्चा होने लगी है। भाजपा के स्थापना दिवस पर राजस्थान की पूर्व मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे के उस भाषण को याद कीजिए, जिसकी काफी चर्चा हुई थी। उन्होंने कहा था कि सत्ता और संगठन में उन्हीं लोगों को प्राथमिकता मिलनी चाहिए, जिनकी पार्टी के प्रति पुरानी निष्ठा और संस्कार रहे हैं।

वसुंधरा ने बिना किसी का नाम लिए उन नेताओं की ओर इशारा किया, जिन्हें दूसरे दलों से तोड़कर भाजपा में लाया जा रहा है। उन्होंने प्रधानमंत्री मोदी की तारीफ जरूर की, लेकिन अटल बिहारी वाजपेयी का उदाहरण देकर परोक्ष रूप से विपक्षी दलों में सेंध लगाकर ताकत बढ़ाने की मौजूदा रणनीति पर सवाल भी खड़ा किया।

सिर्फ सत्ता में बने रहना ही असली मकसद?

मोदी-शाह के आलोचक आरोप लगाते हैं कि उनका पूरा ध्यान सिर्फ चुनाव जीतने और सत्ता में बने रहने पर है। इसी संदर्भ में भाजपा के संस्थापक नेताओं में रहे डॉ. मुरली मनोहर जोशी ने कथित तौर पर करीब 70 पन्नों की एक पावरपॉइंट प्रस्तुति तैयार कर संघ प्रमुख डॉ. मोहन भागवत को भेजी थी। इसे भी पार्टी के भीतर उठ रही वैचारिक बेचैनी के संकेत के रूप में देखा गया।

अध्यक्ष चयन से लेकर मंत्रिमंडल विस्तार तक

इसके बाद भाजपा के नए राष्ट्रीय अध्यक्ष के चयन को लेकर भी संघ बनाम भाजपा की खींचतान की अटकलें लगती रहीं। हालांकि जिस तरह संघ प्रमुख डॉ. मोहन भागवत ने 75 वर्ष की उम्र में 'झोला उठाने' वाले अपने पुराने बयान को लेकर अलग रुख अपनाया, उसी तरह राष्ट्रीय अध्यक्ष के मुद्दे पर भी उन्होंने साफ कहा कि अध्यक्ष चुनना भाजपा का काम है। अगर हमें ही चुनना होता, तो हम कब का चुन चुके होते।

इसके बाद वर्ष की शुरुआत में 46 वर्षीय नितिन नवीन को राष्ट्रीय अध्यक्ष बनाए जाने को भाजपा की पीढ़ीगत बदलाव की रणनीति के तौर पर देखा गया। पार्टी के भीतर इसका कोई खुला विरोध भी नहीं हुआ। हालांकि सात महीने बाद भी नई राष्ट्रीय कार्यकारिणी का गठन नहीं हो पाया। राजनीतिक विश्लेषक नई कार्यकारिणी के गठन में हो रही देरी और लंबे समय से लंबित मंत्रिमंडल विस्तार को संगठन के भीतर संतुलन साधने की चुनौती से जोड़कर देख रहे हैं।

पूर्ण बहुमत नहीं मिलने से बदले हालात?

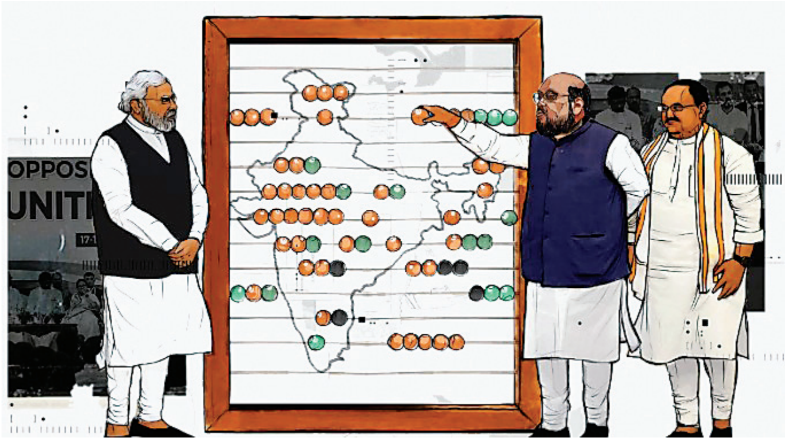

सूत्रों का कहना है कि तीसरे कार्यकाल में भाजपा को अपने दम पर पूर्ण बहुमत नहीं मिलने के बाद परिस्थितियां पहले जैसी नहीं रहीं। पहले भी सहयोगी दल सरकार का हिस्सा थे, लेकिन उनका दबाव इतना प्रभावी नहीं था। अब स्थिति बदल चुकी है। केवल अपने सांसदों को ही नहीं, बल्कि सहयोगी दलों को भी संतुष्ट रखना सरकार की मजबूरी बन गई है। यही वजह है कि मोदी-शाह अब हर कदम फूंक-फूंककर रख रहे हैं।

हालांकि पश्चिम बंगाल में चुनावी सफलता ने भाजपा का मनोबल जरूर बढ़ाया है, लेकिन चुनौतियां भी कम नहीं हुई हैं। डॉ. मुरली मनोहर जोशी के आवास पर कलराज मिश्र, भगत सिंह कोश्यारी जैसे वरिष्ठ नेताओं की बैठकों और हाशिए पर चले गए नेताओं से उनके लगातार संपर्क को राजनीतिक हलकों में सामान्य घटनाक्रम नहीं माना जा रहा। हाल ही में अयोध्या के कथित चंदा चोरी प्रकरण में बजरंग दल के पूर्व राष्ट्रीय संयोजक और पूर्व सांसद विनय कटियार का खुलकर सामने आना भी इन्हीं घटनाओं की कड़ी के रूप में देखा जा रहा है।

जब हमने वरिष्ठ पत्रकार के.पी. मलिक से पूछा कि क्या भाजपा के भीतर मोदी-शाह के खिलाफ कभी बगावत जैसी स्थिति बन सकती है, तो उनका जवाब था कि फिलहाल इसकी संभावना भले कम हो, लेकिन यह कहना भी गलत होगा कि उनकी पकड़ पहले जैसी मजबूत बनी हुई है। उनके अनुसार, पार्टी के भीतर नेतृत्व को लेकर असंतोष की हल्की आहटें अब सुनाई देने लगी हैं। मलिक का कहना है कि यदि नेतृत्व से कोई राजनीतिक चूक होती है, तो वही आगे चलकर चुनौती का रूप ले सकती है। दूसरी ओर, विपक्ष लगातार मोदी-शाह की कथित केंद्रीकृत कार्यशैली को भी मुद्दा बना रहा है।

वरिष्ठ संपादक शेखर गुप्ता के हालिया दो लेख भी कमोबेश इसी दिशा की ओर संकेत करते हैं। अपने एक लेख में उन्होंने लिखा कि लोकसभा में पूर्ण बहुमत न होने के बावजूद मोदी-शाह देश को धीरे-धीरे एकदलीय व्यवस्था की ओर ले जाने की कोशिश कर रहे हैं। इसके बाद तृणमूल कांग्रेस और शिवसेना (यूबीटी) में हुई टूट ने विपक्ष को और अधिक सतर्क कर दिया। आलोचना बढ़ने के बाद राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (शरद पवार) की ओर बढ़ते राजनीतिक कदम भी कुछ धीमे पड़ गए। गुप्ता का मानना है कि मौजूदा परिस्थितियों में मोदी-शाह के लिए लोकसभा में 360 सीटों का आंकड़ा छूना आसान नहीं दिखता।

कांग्रेस की रणनीति से बढ़ी चुनौती

एक पहलू यह भी है कि कांग्रेस की बदली हुई रणनीति भाजपा के लिए नई चुनौती बनती दिखाई दे रही है। शेखर गुप्ता का मानना है कि मोदी-शाह जिस विस्तारवादी राजनीतिक सोच पर आगे बढ़ रहे हैं, उसके जवाब में कांग्रेस ने भी अपनी रणनीति बदलनी शुरू कर दी है। कांग्रेस अब उन क्षेत्रीय दलों के वोट बैंक पर नजर गड़ाए हुए है, जिन्हें भाजपा या तो कमजोर करने या अपने साथ मिलाने की कोशिश में लगी है। उसकी कोशिश है कि इन दलों के परंपरागत मतदाताओं को अपने पक्ष में लाया जाए।

तमिलनाडु से लेकर केरल, कर्नाटक और तेलंगाना तक कांग्रेस की सक्रियता इसी रणनीति का हिस्सा मानी जा रही है। दक्षिण भारत पर उसका बढ़ता फोकस इस बात का संकेत है कि पार्टी एक बार फिर अपनी राजनीतिक वापसी का आधार दक्षिण भारत को बनाना चाहती है। कांग्रेस की रणनीति में आया एक और बदलाव भाजपा के लिए चुनौती बन सकता है। इस रणनीति के तहत कांग्रेस युवाओं और शिक्षा जैसे मुद्दों को भी प्रमुखता देने लगी है। नीट पेपर लीक के मुद्दे पर छात्रों के बीच अभियान चलाना, शिक्षा व्यवस्था की खामियों को राष्ट्रीय बहस का विषय बनाना और उसके बाद विभिन्न आंदोलनों के जरिए युवाओं से सीधा संवाद स्थापित करने की कोशिश इसी रणनीति का हिस्सा है।

आने वाले समय में उत्तर प्रदेश समेत सात राज्यों के विधानसभा चुनावों में भी भाजपा की रणनीति कांग्रेस को केंद्र में रखकर आगे बढ़ने की ही रहेगी। हालांकि उसके सामने सबसे बड़ी चुनौती भी कांग्रेस ही बनी रहेगी। इसकी वजह यह है कि अधिकांश क्षेत्रीय दल या तो पहले की तुलना में कमजोर हुए हैं या फिर किसी न किसी रूप में भाजपा के साथ खड़े दिखाई देते हैं।

शेखर गुप्ता का यह भी मानना है कि 2024 के लोकसभा चुनाव में मोदी को 240 सीटों पर रोकने वाले इंडि गठबंधन के भीतर बाद में जो टूट-फूट हुई, उसने कांग्रेस के सामने अपने दम पर उभरने की नई संभावनाएं भी खोल दी हैं। कांग्रेस भी अब यह समझने लगी है कि केवल गठबंधन की राजनीति के भरोसे सत्ता परिवर्तन संभव नहीं है।

बदलती धारणा भी बड़ी चुनौती

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि देश में तेजी से बदलते राजनीतिक और सामाजिक हालात, वैश्विक परिस्थितियों का असर और सबसे बढ़कर आम लोगों की बदलती राजनीतिक धारणा भी मोदी-शाह की अब तक बनी रही निर्विवाद छवि के सामने नई चुनौती बन रही है। यह बदलाव अपने आप में महत्वपूर्ण है और भाजपा नेतृत्व के लिए इसे नजरअंदाज करना आसान नहीं होगा।

क्या 'मूल भाजपा' का सवाल और बड़ा होगा?

- पश्चिम बंगाल में चुनावी सफलता के बाद तृणमूल कांग्रेस और महाराष्ट्र में उद्धव ठाकरे के नेतृत्व वाली शिवसेना से जुड़े नेताओं और सांसदों के भाजपा में आने के आरोपों ने यह बहस तेज कर दी कि क्या बहुमत हासिल करने के लिए मोदी-शाह किसी भी हद तक जाने को तैयार हैं।
- बेशक, मोदी-शाह राजनीति में आदर्शवाद का पाठ पढ़ाने नहीं आए हैं। उनकी अपनी राजनीतिक शैली है और उसी के अनुरूप वे आगे बढ़ रहे हैं। लेकिन इसके साथ एक सवाल लगातार खड़ा होता है कि क्या इस रणनीति के बीच भाजपा अपनी मूल वैचारिक पहचान और संगठनात्मक चरित्र को लंबे समय तक बचाए रख पाएगी?
- जब यह तथ्य सामने आता है कि हाल के संसदीय चुनाव में भाजपा का लगभग हर चौथा प्रत्याशी मूल रूप से भाजपा का नहीं था, तब यह धारणा स्वाभाविक रूप से मजबूत होती है कि पार्टी धीरे-धीरे अपने पारंपरिक संगठनात्मक ढांचे और वैचारिक आधार से अलग दिशा में बढ़ रही है। आने वाले वर्षों में यही सवाल भाजपा की सबसे बड़ी आंतरिक चुनौती भी बन सकता है।

42 YEARS CELEBRATING OF TRUST
THE LIQUID GOLD

ISO 22000 2018

स्वाद वो जो बना दे बात

मनभाती महक, लाजवाब स्वाद, भरपूर पौष्टिकता

सोना सिक्का®©

BEST CHOICE REFINED GROUNDNUT OIL
शुद्धता से समझौता नहीं
SONA SIKKA

महंगा है पर खरा है!

स्वाद और सेहत से भरा है

42 वर्षों से शुद्धता के हर मापदंड पर खरा उतरा है, इसलिए बेस्ट है सोना सिक्का

सोना सिक्का रखता है ख्याल आपकी सेहत का आपके परिवार की खुशियों का इसलिए सोना सिक्का तेल के निर्माण में गुणवत्ता शुद्धता और सेहत से कोई समझौता नहीं किया जाता है।

परिवार की सेहत के लिए सोना सिक्का में व्यंजन बनायें, खुद खायें, सबकों खिलायें....!

मिलते-जुलते नाम और अशुद्ध ब्रांड से सावधान. आपके स्वास्थ्य से बढ़कर कुछ नहीं

SHAKUN

Shyam and Shyam Oils Pvt. Ltd. Jodhpur

Plot No. B 5,6,7 (A), 1st Phase, Basni Industrial Area, Jodhpur, (Raj.)

डिस्ट्रीब्यूटर बनने एवं डीलरशिप हेतु
टोल फ्री नं. पर सम्पर्क करें: 1800 313 3292

sonasikka.com | info@sonasikka.com | sonasikka
0291-2512333, 2512338
Available on : amazon | Flipkart

फुनगी को फांसी... शाखाओं को माफी

अयोध्या राममंदिर में चढ़ावे में कथित अनियमितताओं की जांच केवल वित्तीय पहलुओं तक सीमित नहीं है। असली सवाल यह है कि क्या जवाबदेही शीर्ष स्तर तक पहुंचेगी या कार्रवाई केवल निचले कर्मचारियों तक सिमट जाएगी।

राधा रमण
वरिष्ठ पत्रकार

अयोध्या का राममंदिर केवल एक मंदिर नहीं, बल्कि करोड़ों लोगों की आस्था का केंद्र है। इसके निर्माण में देश-विदेश के लाखों श्रद्धालुओं का योगदान रहा है। ऐसे में चढ़ावे में कथित गड़बड़ी का मामला केवल आर्थिक अनियमितता नहीं, बल्कि जनविश्वास और धार्मिक संस्थानों की पारदर्शिता का प्रश्न भी बन जाता है। इसलिए आज सबसे बड़ा सवाल गड़बड़ी की राशि नहीं, बल्कि यह है कि क्या इसकी जांच अपने तार्किक और न्यायसंगत निष्कर्ष तक पहुंचेगी या यह मामला राजनीतिक आरोप-प्रत्यारोप के शोर में दब जाएगा।

इसी पृष्ठभूमि में सर्वोच्च न्यायालय इस मामले की निगरानी कर रहा है। उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित विशेष जांच दल (एसआईटी) अपनी स्थिति रिपोर्ट अदालत को बंद लिफाफे में सौंप चुका है। मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत की अध्यक्षता वाली पीठ ने रिपोर्ट का अध्ययन करने के बाद आगे की सुनवाई का निर्णय लिया और राज्य सरकार को वरिष्ठ आईपीएस अधिकारी की अगुवाई में नया एसआईटी प्रमुख नियुक्त करने का निर्देश दिया। अदालत की यह सतर्कता जांच की निष्पक्षता को लेकर उसकी गंभीरता दर्शाती है। अंतिम निष्कर्ष जांच और न्यायिक प्रक्रिया पूरी होने के बाद ही सामने आएंगे।

विवाद तब सामने आया, जब समाजवादी पार्टी के पूर्व विधायक तेजनारायण पांडेय उर्फ पवन पांडेय ने सात जून को राममंदिर में लगभग साढ़े सात करोड़ रुपये के चढ़ावे में कथित गड़बड़ी का आरोप लगाया। अगले ही दिन पार्टी अध्यक्ष अखिलेश यादव ने भी यह मुद्दा सार्वजनिक रूप से उठाया। इसके बाद कई संतों और हिंदू संगठनों के प्रतिनिधियों ने निष्पक्ष जांच की मांग की। देखते ही देखते यह मामला स्थानीय विवाद से निकलकर राष्ट्रीय बहस का विषय बन गया।

शुरुआत में ट्रस्ट ने सभी व्यवस्थाओं को सामान्य बताया। हालांकि, इससे पहले स्थानीय पुलिस की मौजूदगी में सात लोगों के पास से लगभग 80 लाख रुपये बरामद होने की जानकारी सामने आ चुकी थी। बढ़ते दबाव के बीच ट्रस्ट के आग्रह पर राज्य सरकार ने एसआईटी का गठन किया।

यहीं से कई ऐसे प्रश्न उठे, जिनका स्पष्ट उत्तर अब तक सामने नहीं आया है। सामान्यतः किसी भी आपराधिक मामले में पहले प्राथमिकी दर्ज होती है और उसके बाद आवश्यकता पड़ने पर विशेष जांच दल गठित किया जाता है। लेकिन इस मामले में पहले एसआईटी बनी और बाद में उसकी प्रारंभिक रिपोर्ट के आधार पर ट्रस्ट की ओर से शिकायत दर्ज कराई गई। यह प्रक्रिया स्वाभाविक रूप से कई सवाल खड़े करती है। मसलन, जांच की दिशा क्या है और उसका उद्देश्य क्या है?

राजनीतिक बयानबाजी ने उलझाया मामला

राजनीतिक बयानबाजी ने मामले को और उलझा दिया। विपक्ष ने इसे जवाबदेही का प्रश्न बनाया, जबकि सत्तापक्ष ने इसे धार्मिक आस्था के राजनीतिकरण का प्रयास बताया। संसद से सड़क तक शोर मचा, लेकिन चढ़ावे की सुरक्षा और जवाबदेही का मूल प्रश्न पीछे छूट गया। दरअसल, यह मामला किसी राजनीतिक दल की जीत या हार का नहीं है। मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा या चर्च किसी व्यक्ति, संगठन अथवा सरकार की निजी संपत्ति नहीं होते। इनका निर्माण समाज की आस्था, सहयोग और विश्वास से होता है। इसलिए इनके संचालन में पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करना उतना ही आवश्यक है, जितना उनकी धार्मिक गरिमा बनाए रखना। अयोध्या का राममंदिर विशेष रूप से करोड़ों रामभक्तों के सहयोग से बना है। ऐसे में चढ़ावे से जुड़े किसी भी विवाद पर प्रश्न उठाना आस्था का अपमान नहीं, बल्कि उसी आस्था की रक्षा का प्रयास माना जाना चाहिए।

इसी बीच छह जुलाई को श्रीराम जन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र ट्रस्ट की बैठक हुई। बैठक के बाद ट्रस्ट के कोषाध्यक्ष गोविंददेव गिरि ने कहा कि इस घटना से रामभक्तों की आस्था को ठेस पहुंची है और इसी कारण तत्कालीन महासचिव चंपत राय ने पद छोड़ने की इच्छा जताई। बाद में ट्रस्ट की संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार उनका त्यागपत्र प्रभावी माना गया। डॉ. अनिल मिश्र ने भी पद छोड़ा और ट्रस्ट ने कृष्णमोहन को कार्यवाहक महासचिव की जिम्मेदारी सौंपी। साथ ही मंदिर के प्रबंधक गोपाल राव को कार्य से विरत कर दिया गया।

इन घटनाक्रमों से स्पष्ट है कि ट्रस्ट ने मामले को गंभीरता से लिया। फिर भी प्रश्न यही है कि यदि व्यवस्थागत कमियां थीं, तो उनकी जिम्मेदारी किस स्तर पर तय होगी? चंपत राय ने चढ़ावे की कथित गड़बड़ी के लिए अन्य अधिकारियों और बैंकिंग व्यवस्था की ओर संकेत किया। दूसरी ओर ट्रस्ट ने भी स्वीकार किया कि गणना और निगरानी व्यवस्था में सुधार की आवश्यकता है। जांच जारी है, इसलिए किसी की जिम्मेदारी तय करना अभी जल्दबाजी होगी। लेकिन लगातार सामने आई खामियां पूरी व्यवस्था की जवाबदेही पर प्रश्नचिह्न अवश्य लगाती हैं। बताया गया कि चढ़ावे की गणना वाले कक्ष का सीसीटीवी रिकॉर्ड केवल 45 दिन तक सुरक्षित रखा जाता था। इसी अवधि में कई संदिग्ध घटनाओं की जानकारी सामने आई। यदि यह तथ्य सही है, तो यह प्रश्न भी उठना स्वाभाविक है कि देश के सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक स्थलों में से एक राममंदिर की सुरक्षा व्यवस्था इतनी सीमित क्यों थी। आधुनिक तकनीक के इस दौर में ऐसी व्यवस्थाएं कहीं अधिक मजबूत और दीर्घकालिक होनी चाहिए थीं।

मजबूत होगा प्रशासनिक ढांचा, ड्रेसकोड भी लागू

इसी बीच 22 जुलाई को श्रीराम जन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र ट्रस्ट की एक और बैठक हुई। इसमें प्रशासनिक ढांचे को मजबूत करने के उद्देश्य से कई महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए। नया मुख्य कार्यकारी अधिकारी नियुक्त करने की प्रक्रिया शुरू करने, नया प्रवक्ता चुनने, सीसीटीवी निगरानी बढ़ाने, बैंकिंग व्यवस्था की समीक्षा करने तथा कोषाध्यक्ष गोविंददेव गिरि की अध्यक्षता में नौ सदस्यीय धार्मिक समिति गठित करने के प्रस्ताव पारित किए गए। चढ़ावे की गणना से जुड़े कर्मचारियों को बदला गया और उनके लिए बिना जेब वाला विशेष ड्रेसकोड भी लागू किया गया।

यह स्वागतयोग्य कदम है। देश के अनेक प्रमुख मंदिरों, जैसे तिरुपति बालाजी और शिरडी साईं मंदिर में ऐसी व्यवस्थाएं पहले से लागू हैं। प्रश्न केवल इतना है कि अयोध्या में यह व्यवस्था पहले दिन से क्यों नहीं अपनाई गई।

सुधारात्मक कदम स्वागतयोग्य हैं, लेकिन केवल प्रक्रियाएं बदल देने से विश्वास पूरी तरह बहाल नहीं होगा। सबसे जरूरी है कि जांच निष्पक्ष, पारदर्शी और समयबद्ध हो तथा जवाबदेही हर स्तर पर तय की जाए।

यह समस्या केवल अयोध्या तक सीमित नहीं है। देश के अनेक मंदिरों, मस्जिदों, दरगाहों और चर्चों में समय-समय पर वित्तीय अनियमितताओं और संपत्ति विवादों के आरोप सामने आते रहे हैं। इसलिए यह बहस अब सभी धार्मिक संस्थानों में पारदर्शी प्रशासनिक व्यवस्था विकसित करने की दिशा में आगे बढ़नी चाहिए।

आवश्यकता केवल दोषियों को पकड़ने की नहीं, बल्कि ऐसी व्यवस्था बनाने की है, जिसमें भविष्य में इस तरह की घटनाओं की गुंजाइश न्यूनतम हो। डिजिटल लेखा प्रणाली, स्वतंत्र ऑडिट और आधुनिक निगरानी व्यवस्था इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हो सकते हैं।

सबसे बड़ा प्रश्न यही है कि क्या जांच उन सभी स्तरों तक पहुंचेगी, जहां जवाबदेही तय होनी चाहिए, या फिर कार्रवाई केवल निचले कर्मचारियों तक सीमित रह जाएगी। यदि ऐसा हुआ तो 'फुनगी को फांसी... शाखाओं को माफी' वाली आशंका और गहरी होगी।

करोड़ों रामभक्त किसी राजनीतिक निष्कर्ष की प्रतीक्षा नहीं कर रहे। उनकी अपेक्षा केवल इतनी है कि जांच निष्पक्ष हो, जवाबदेही हर स्तर पर तय हो और राममंदिर जैसी राष्ट्रीय आस्था से जुड़ी संस्था पर जनता का विश्वास अक्षुण्ण बना रहे। अंततः किसी भी धर्मस्थल की सबसे बड़ी पूंजी उसका चढ़ावा नहीं, बल्कि श्रद्धालुओं का विश्वास होता है।

धर्मस्थलों के लिए नियामक आयोग पर गंभीर विचार जरूरी

अयोध्या का प्रकरण पहला नहीं है। इससे पहले तिरुपति बालाजी मंदिर, केदारनाथ, पद्मनाभस्वामी मंदिर और बदरीनाथ सहित कई प्रमुख धार्मिक संस्थानों में समय-समय पर वित्तीय अनियमितताओं, चढ़ावे के प्रबंधन और संपत्ति विवादों से जुड़े मामले सामने आते रहे हैं। मस्जिदों, दरगाहों और चर्चों में भी ऐसी शिकायतें नई नहीं हैं।

ऐसे में अब समय आ गया है कि सभी प्रमुख धार्मिक संस्थानों के लिए पारदर्शी वित्तीय प्रबंधन, नियमित स्वतंत्र ऑडिट और आधुनिक निगरानी व्यवस्था सुनिश्चित करने पर राष्ट्रीय स्तर पर गंभीर विमर्श हो। आस्था का सम्मान तभी सुरक्षित रहेगा, जब उसके साथ जवाबदेही भी जुड़ी होगी। धार्मिक संस्थानों में आने वाला दान समाज की अमानत है। उसका प्रबंधन भी उसी स्तर की पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के साथ होना चाहिए, जिसकी अपेक्षा किसी सार्वजनिक संस्था से की जाती है। यही व्यवस्था धार्मिक संस्थानों की विश्वसनीयता और श्रद्धालुओं के विश्वास दोनों को सुदृढ़ करेगी।

नए भारत की नई पहचान

भारतीय महिलाएं आज पारंपरिक सीमाओं को पीछे छोड़ते हुए राष्ट्र-निर्माण की प्रमुख भागीदार बन चुकी हैं। यह आलेख उनकी प्रेरक उपलब्धियों, सरकारी पहलों और सामाजिक परिवर्तन की पड़ताल करता है तथा बताता है कि महिला सशक्तिकरण केवल सामाजिक न्याय नहीं, बल्कि विकसित भारत के निर्माण की अनिवार्य शर्त है।

दिव्यांशी श्रीवास्तव
लेखिका

यदि किसी राष्ट्र की प्रगति को परखना हो, तो वहां की महिलाओं की स्थिति को देखना पर्याप्त है।

आज भारत में यह विचार केवल एक आदर्श नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की वास्तविक कहानी बनता जा रहा है। शिक्षा, तकनीक, उद्यमिता और नेतृत्व के क्षेत्र में भारतीय महिलाएं लगातार नए आयाम स्थापित कर रही हैं। वे अब केवल परिवार की धुरी नहीं, बल्कि आर्थिक विकास, सामाजिक परिवर्तन और राष्ट्र-निर्माण की अग्रणी भागीदार बन चुकी हैं।

पिछले एक दशक में महिला सशक्तिकरण को केंद्र में रखकर अनेक सरकारी योजनाएं और सामाजिक पहलें शुरू की गईं। 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ', 'सुकन्या समृद्धि योजना', स्वयं सहायता समूहों और कौशल विकास कार्यक्रमों ने लाखों महिलाओं को शिक्षा, वित्तीय सशक्तिकरण और स्वरोजगार से जोड़ा है। ग्रामीण भारत में आज अनेक महिलाएं स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से लघु उद्योग, डेयरी, हस्तशिल्प और कृषि-आधारित उद्यम संचालित कर आर्थिक आत्मनिर्भरता की मिसाल प्रस्तुत कर रही हैं। इससे न केवल परिवारों की आय बढ़ी है, बल्कि स्थानीय अर्थव्यवस्था को भी नई गति मिली है।

महिला सशक्तिकरण की सबसे मजबूत नींव शिक्षा है। शिक्षित महिला अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने के साथ-साथ परिवार और समाज में सकारात्मक परिवर्तन का माध्यम बनती है। सावित्रीबाई फुले, पंडिता रमाबाई और डॉ. मुथुलक्ष्मी रेड्डी जैसी समाज सुधारकों ने महिला शिक्षा का जो आंदोलन शुरू किया था, वही आज व्यापक सामाजिक परिवर्तन का आधार बन चुका है। समावेशी शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षाविद् मिथु अलूर का योगदान भी उल्लेखनीय है। उनके प्रयासों ने दिव्यांग बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और समान अवसरों की दिशा में नई सोच विकसित की।

रक्षा क्षेत्र में भारतीय महिलाओं की बढ़ती भागीदारी देश के बदलते दृष्टिकोण का सशक्त उदाहरण है। फ्लाइट लेफ्टिनेंट अवनी चतुर्वेदी का मिग-21 बाइसन लड़ाकू विमान की एकल उड़ान भरना केवल व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं था, बल्कि भारतीय महिलाओं की क्षमता और आत्मविश्वास का राष्ट्रीय प्रतीक बन गया। इसी प्रकार कर्नल सोफिया कुरैशी और विंग कमांडर व्योमिका सिंह ने सैन्य नेतृत्व में महिलाओं की बढ़ती भूमिका को प्रभावशाली ढंग से स्थापित किया।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी भारतीय महिलाओं ने वैश्विक पहचान बनाई है। इसरो की वैज्ञानिक ऋतु करिधल श्रीवास्तव ने मंगलयान मिशन की सफलता में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाकर भारत को अंतरिक्ष विज्ञान के अग्रणी देशों की श्रेणी में स्थापित करने में योगदान दिया। वहीं, इंजीनियरिंग विशेषज्ञ डॉ. जी. माधवी लता ने विश्व के सबसे ऊंचे चिनाब रेलवे पुल के निर्माण में अपनी विशेषज्ञता का परिचय देकर यह सिद्ध किया कि तकनीकी क्षेत्रों में भी भारतीय महिलाएं नेतृत्व करने में पूरी तरह सक्षम हैं।

कॉरपोरेट जगत में फाल्गुनी नायर की सफलता आधुनिक भारतीय महिला उद्यमिता का प्रेरक उदाहरण है। पचास वर्ष की आयु में 'नायका' की स्थापना कर उन्होंने यह साबित किया कि अनुभव, दूरदृष्टि और साहस के बल पर किसी भी उम्र में नई शुरुआत की जा सकती है। इसी प्रकार माधबी पुरी बुच का भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) की पहली महिला अध्यक्ष बनना वित्तीय नेतृत्व में महिलाओं की बढ़ती उपस्थिति का प्रमाण है।

हालांकि उपलब्धियों के इस उज्ज्वल परिदृश्य के बावजूद चुनौतियां अभी भी मौजूद हैं। लैंगिक असमानता, असमान वेतन, कार्यस्थल पर सुरक्षा, बाल विवाह, डिजिटल विभाजन और उच्च शिक्षा तक समान पहुंच जैसे मुद्दे आज भी गंभीर चिंता का विषय हैं। महिला सशक्तिकरण का वास्तविक अर्थ केवल योजनाएं बनाना नहीं, बल्कि ऐसी सामाजिक व्यवस्था तैयार करना है जहां प्रत्येक महिला बिना किसी भेदभाव के अपनी क्षमता का पूर्ण विकास कर सके।

भारत आज उस दौर में खड़ा है जहां महिला सशक्तिकरण केवल सामाजिक न्याय का प्रश्न नहीं, बल्कि आर्थिक और राष्ट्रीय विकास की अनिवार्य शर्त बन चुका है। विश्व बैंक और विभिन्न राष्ट्रीय अध्ययनों में भी यह स्पष्ट किया गया है कि महिलाओं की शिक्षा, रोजगार और नेतृत्व में बढ़ती भागीदारी किसी भी देश की आर्थिक प्रगति को गति देती है।

सशक्त नारी ही सशक्त भारत की वास्तविक आधारशिला है। जब प्रत्येक बेटी को शिक्षा, सम्मान, सुरक्षा और अवसर मिलेगा, तभी भारत आत्मनिर्भर, समावेशी और विकसित राष्ट्र बनने की दिशा में अपनी पूर्ण क्षमता के साथ आगे बढ़ सकेगा। महिला सशक्तिकरण कोई सामाजिक अभियान मात्र नहीं, बल्कि भारत के भविष्य में किया गया सबसे महत्त्वपूर्ण निवेश है।

युवा जोश की ताजपोशी

अजय अस्थाना,
वरिष्ठ पत्रकार

48 टीमों वाले इस विश्व कप में स्पेन ने साबित कर दिया कि आधुनिक फुटबॉल में खिताब किसी एक महान खिलाड़ी की चमक से नहीं, बल्कि युवा ऊर्जा, अनुशासित रणनीति और सामूहिक खेल से जीते जाते हैं।

न्यू यॉर्क और न्यू जर्सी की उस रात, जब मेटलाइफ स्टेडियम में अंतिम सीटी बजी, तो स्पेन के खिलाड़ी खुशी से एक-दूसरे के गले लग गए और अर्जेंटीना के चेहरे मायूसी से झुक गए। स्कोरबोर्ड पर केवल एक गोल का अंतर था, लेकिन इस एक गोल ने विश्व फुटबॉल की बदलती तस्वीर को साफ कर दिया। स्पेन दूसरी बार विश्व चैंपियन बन चुका था और अर्जेंटीना का खिताब बचाने का सपना टूट गया। लेकिन इस फाइनल की असली कहानी केवल जीत और हार की नहीं थी। यह उस बदलाव की कहानी थी, जिसकी आहट पिछले कुछ वर्षों से सुनाई दे रही थी।

फीफा विश्व कप 2026 कई मायनों में इतिहास में दर्ज रहेगा। पहली बार तीन देशों अमेरिका, कनाडा और मैक्सिको ने संयुक्त रूप से मेजबानी की। पहली बार 48 टीमें मैदान में उतरीं। पहली बार 104 मुकाबले खेले गए। यह केवल विश्व कप का विस्तार नहीं था, बल्कि फुटबॉल की बढ़ती लोकप्रियता का भी प्रतीक था। नई टीमों के आने से छोटे देशों को बड़ा मंच मिला और शुरुआती दौर से ही मुकाबलों में अनिश्चितता और रोमांच बना रहा।

लेकिन इस विश्व कप की सबसे बड़ी कहानी आंकड़ों में नहीं, मैदान पर लिखी गई। यह कहानी थी फुटबॉल की बदलती सोच की। कभी यह खेल ऐसे महान खिलाड़ियों के इर्द-गिर्द घूमता था, जिनकी एक चमक पूरी टीम की तकदीर बदल देती थी। पेले, माराडोना, जिदान, रोनाल्डो, रोनाल्डिन्हो, मेसी और क्रिस्टियानो रोनाल्डो जैसे नाम विश्व कप की पहचान बन गए। लेकिन 2026 का विश्व कप इस सोच को नई कसौटी पर कसता नजर आया।

इस बार दुनिया के लगभग सभी बड़े सितारे मैदान में थे। लियोनेल मैसी पर एक बार फिर दुनिया की निगाहें टिकी थीं। किलियन एम्बापे से लेकर कई स्थापित खिलाड़ियों पर भी निगाहें थीं। लेकिन जैसे-जैसे टूर्नामेंट आगे बढ़ा, यह स्पष्ट होता गया कि केवल एक बड़े नाम के भरोसे विश्व कप जीतना अब आसान नहीं रहा। आधुनिक फुटबॉल में अब जीत की नींव पूरे मैदान पर फैली होती है, जहां डिफेंडर से लेकर गोलकीपर और मिडफील्डर तक हर खिलाड़ी बराबर की जिम्मेदारी निभाता है।

इस बदलाव का सबसे बड़ा उदाहरण स्वयं स्पेन बना। उसकी सफलता किसी एक खिलाड़ी के कंधों पर नहीं टिकी थी। पूरी टीम एक लय में खेलती दिखाई दी। गेंद खोने के कुछ सेकंड के भीतर उसे वापस हासिल करने की क्षमता, तेज ट्रांजिशन और विंग से लगातार हमले—यही उसकी सबसे बड़ी ताकत रहे। विरोधी टीम को सोचने और संभलने का समय ही नहीं मिलता था। यही कारण रहा कि पूरे टूर्नामेंट में स्पेन की रक्षापंक्ति अभेद्य बनी रही।

दूसरी ओर अर्जेंटीना ने अपने अनुभव और जुझारूपन के दम पर लगातार कठिन मुकाबले जीते। उसके पास लियोनेल मैसी जैसा खिलाड़ी था, जिसकी मौजूदगी भर से विपक्षी टीम अतिरिक्त सतर्क हो जाती है। लेकिन फाइनल ने यह भी दिखाया कि आधुनिक फुटबॉल में किसी एक खिलाड़ी को रोक देने भर से पूरी टीम की लय बिगाड़ी जा सकती है। स्पेन ने यही किया। उसने मैसी को खुली जगह नहीं दी और अर्जेंटीना की आक्रमण श्रृंखला को बार-बार तोड़ता रहा। नतीजा यह हुआ कि अर्जेंटीना पूरे मुकाबले में अपने स्वाभाविक खेल से दूर नजर आया।

फाइनल का स्कोर भले केवल 1-0 रहा, लेकिन खेल का संतुलन कहीं अधिक स्पष्ट था। स्पेन पूरे मैच में आक्रमण की पहल करता रहा, जबकि अर्जेंटीना जवाबी हमलों के अवसर तलाशता रहा। एमिलियानो मार्टिनेज ने कई शानदार बचाव कर मुकाबले को लंबे समय तक जीवित रखा। यदि वे अपने सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन पर नहीं होते, तो शायद परिणाम निर्धारित समय में ही सामने आ जाता। लेकिन फुटबॉल की खूबसूरती यही है कि कभी-कभी एक गोलकीपर अकेले पूरी टीम की उम्मीदों को देर तक जीवित रख सकता है। फिर भी अंत में जीत उसी टीम की हुई, जिसने पूरे टूर्नामेंट में सामूहिक खेल का सबसे अनुशासित प्रदर्शन किया।

दरअसल, 2026 का विश्व कप केवल स्पेन के चैंपियन बनने की कहानी नहीं है। यह उस बदलाव का दस्तावेज है, जिसमें फुटबॉल धीरे-धीरे सुपरस्टारों के खेल से आगे बढ़कर टीमों के खेल में बदलता दिखाई दे रहा है। मैदान पर आज भी बड़े नाम आकर्षण का केंद्र हैं, लेकिन ट्रॉफी अब उसी टीम के हाथ में जाती है, जिसके ग्यारह खिलाड़ी एक साथ सोचते, दौड़ते और लड़ते हैं। शायद यही इस विश्व कप का सबसे बड़ा संदेश भी है।

नए सितारों की चमक, बदलता फुटबॉल

हर विश्व कप अपने साथ कुछ नए नायक लेकर आता है। यही इस खेल की सबसे बड़ी खूबसूरती भी है। एक पीढ़ी विदा होने लगती है तो दूसरी उसी मंच पर अपना परिचय देती है। 2026 का विश्व कप भी इसका अपवाद नहीं रहा। दुनिया की निगाहें भले लियोनेल मैसी, किलियन एम्बाप्पे और अन्य स्थापित सितारों पर टिकी थीं, लेकिन टूर्नामेंट खत्म होते-होते चर्चा युवा खिलाड़ियों की होने लगी।

स्पेन के युवा खिलाड़ियों ने पूरे विश्व कप में जिस आत्मविश्वास और परिपक्वता का प्रदर्शन किया, उसने यह भरोसा जगा दिया कि विश्व फुटबॉल का भविष्य सुरक्षित हाथों में है। फाइनल में निर्णायक गोल भी किसी व्यक्तिगत करिश्मे का परिणाम नहीं, बल्कि तीन खिलाड़ियों की बेहतरीन समझ और तालमेल का नतीजा था। यही विश्व कप का सबसे बड़ा संदेश भी है कि खिताब वही जीतता है, जिसके पास मजबूत टीम होती है। इतिहास पर नजर डालें तो पेले, माराडोना, जिदान और मैसी जैसे महान खिलाड़ियों के पीछे भी मजबूत टीम खड़ी थी। 2026 के विश्व कप ने इस सत्य को फिर रेखांकित किया कि विश्व कप जीतने के लिए सामूहिक अनुशासन और संतुलित टीम अनिवार्य है।

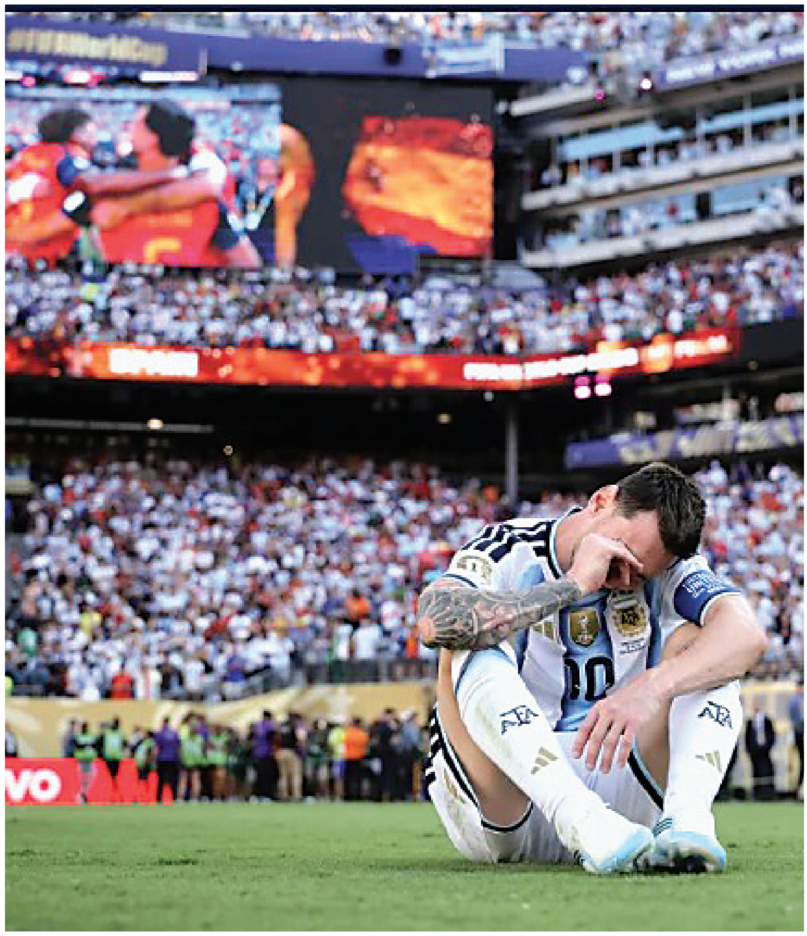

48 टीमों का प्रयोग कितना सफल रहा

फीफा का 48 टीमों वाला नया प्रारूप शुरू में काफी विवादों में रहा। आशंका थी कि इससे प्रतियोगिता का स्तर प्रभावित होगा और एकतरफा मुकाबले बढ़ जाएंगे। लेकिन टूर्नामेंट ने इन आशंकाओं को काफी हद तक गलत साबित किया। अधिक देशों को मौका मिलने से फुटबॉल का दायरा और व्यापक हुआ। छोटे देशों के खिलाड़ियों को पहली बार विश्व मंच मिला। कई मुकाबलों में अपेक्षाकृत कमजोर टीमों ने मजबूत प्रतिद्वंद्वियों को कड़ी चुनौती दी। इससे शुरुआती चरण भी रोमांचक बने रहे। हालांकि, इतने लंबे टूर्नामेंट ने खिलाड़ियों की फिटनेस, यात्रा और क्लब फुटबॉल के कैलेंडर को लेकर नई बहस भी छेड़ दी।

तकनीक से बढ़ी पारदर्शिता... इस विश्व कप में तकनीक केवल सहायक नहीं, बल्कि खेल का भरोसेमंद साथी बनकर उभरी। सेमी-ऑटोमेटेड ऑफसाइड तकनीक ने विवादास्पद फैसलों को काफी हद तक समाप्त किया। वीडियो असिस्टेंट रेफरी पहले की तुलना में अधिक प्रभावी नजर आया, जबकि गोल लाइन तकनीक और डिजिटल विश्लेषण ने निर्णयों की विश्वसनीयता बढ़ाई। इसका परिणाम यह हुआ कि खिलाड़ियों का ध्यान विवादों से अधिक खेल पर केंद्रित रहा। आधुनिक फुटबॉल अब केवल गति और कौशल का नहीं, बल्कि तकनीकी सटीकता का भी खेल बन चुका है।

प्रेरणा से परिवर्तन,
परिवर्तन से जीवन

दीप फाउन्डेशन

समावेशन, शिक्षा एवं सशक्तिकरण की एक यात्रा

डॉ. चंद्रकला गोस्वामी

क्लिनिकल मनोवैज्ञानिक | थेरेपिस्ट | शिक्षाविद
परामर्शदाता | समाजसेवी | नेतृत्वकर्ता

मानसिक स्वास्थ्य, विशेष शिक्षा एवं सामाजिक परिवर्तन की प्रेरक अग्रदूत

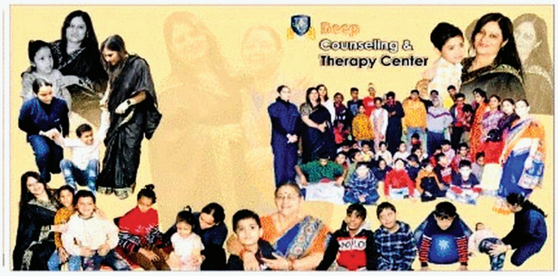

डॉ. चंद्रकला गोस्वामी एक प्रतिष्ठित क्लिनिकल मनोवैज्ञानिक, मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञ, शिक्षाविद एवं समाजसेवी हैं। विगत दो दशकों से अधिक समय से वे मानसिक स्वास्थ्य, विशेष शिक्षा, पुनर्वास, पारिवारिक परामर्श तथा सामुदायिक विकास के क्षेत्र में समर्पित भाव से कार्यरत हैं।

उन्होंने हजारों बच्चों, युवाओं, महिलाओं एवं परिवारों को मनोवैज्ञानिक परामर्श, विशेष शिक्षा, व्यवहार चिकित्सा तथा पुनर्वास सेवाओं के माध्यम से आत्मनिर्भर एवं आत्मविश्वासी जीवन की ओर अग्रसर किया है।

डीप फाउंडेशन की संस्थापक एवं निदेशक के रूप में उनका उद्देश्य प्रत्येक विशेष आवश्यकता वाले बच्चे को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, प्रभावी थेरेपी, समुचित पुनर्वास तथा समाज में सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अवसर प्रदान करना है।

> "हर बच्चे में
> अनंत संभावनाएँ छिपी होती हैं।
> उचित मार्गदर्शन, संवेदनशील सहयोग
> और सही अवसर मिलें तो
> प्रत्येक व्यक्ति आत्मनिर्भर,
> आत्मविश्वासी और सफल
> जीवन जी सकता है।"

दीप फउन्डेशन पूनर्वास केन्द्र

बौद्धिक एवं विकासात्मक दिव्यांग बच्चों के लिए समर्पित सेवाएँ

- स्पीच थेरेपी
- विहेवियर थेरेपी
- अटेंशन थेरेपी
- आईक्यू एवं कौशल मूल्यांकन
- अवसाद, चिंता एवं अन्य मानसिक समस्याओं का मनोवैज्ञानिक परामर्श
- प्रारंभिक हस्तक्षेप कार्यक्रम
- व्यक्तित्व विकास
- पढ़ने-लिखने के कौशल का विकास
- भाषा एवं उच्चारण प्रशिक्षण
- संसाधन कक्ष (Resource Support)
- आत्मविश्वास निर्माण
- अधिगम कौशल विकास

हमारा संकल्प : संवेदनशील, सक्षम और समर्पित विशेष शिक्षकों के माध्यम से समावेशी शिक्षा और सामाजिक विकास को बढ़ावा देना।

दीप फउन्डेशन स्पेशल टी.टी कॉलेज

जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर से संबद्ध एवं भारतीय पुनर्वास परिषद (RCI) से मान्यता प्राप्त

बी.एड. विशेष शिक्षा (बौद्धिक दिव्यांगता)

चार वर्षीय समेकित डिग्री कार्यक्रम

यह कार्यक्रम विशेष शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिक ज्ञान, व्यावहारिक प्रशिक्षण एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षण कौशल प्रदान करता हैं। यह राष्ट्रीय शिक्षा मीति के अनुरूप तैयार किया गया है तथा विद्यार्थियों को विशेष शिक्षक एवं पुनर्वास विशेषज्ञ के रूप में उत्कृष्ट अवसर उपलब्ध कराता है।

इस पाठ्यक्रम के स्नातक आरसीआई मान्यता प्राप्त विद्यालयों में अध्यापन तथा सरकारी भर्ती के लिए पात्र होते हैं।

व्यावसायिक दावित्व

- फेकल्टी (विशेष शिक्षा) Tepse & Hepsn Center जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर
- उच्च न्यायालय परामर्शदाता
- बाल कल्याण समिति (CWC) परामर्शदाता

योग्यता एवं विशेषज्ञता

- मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर
- क्लिनिकल मनोविज्ञान एवं पुनर्वास परामर्श में उन्नत प्रशिक्षण
- मानसिक स्वास्थ्य, विशेष शिक्षा एवं थेरेपी में विशेषज्ञता
- प्रशिक्षक, मार्गदर्शक एवं अकादमिक सलाहकार

उपलब्धियाँ एवं प्रभाव

- 20+ वर्षों का समर्पित अनुभव
- हजारों बच्चों एवं परिवारों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन
- विशेष शिक्षा एवं समावेशी शिक्षा को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण योगदान
- शिक्षा, मानसिक स्वास्थ्य एवं सामाजिक सेवा के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य
- विद्यालयों, संस्थानों एवं सामाजिक संगठनों के साथ सक्रिय सहयोग
- समावेशी एवं सशक्त समाज के निर्माण हेतु सतत प्रयास

ऐसे समावेशी समाज का निर्माण करना, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान, समान अवसर और आत्मनिर्भर जीवन जीने का अधिकार प्राप्त हो।

हमसे जुड़ें

+91 97733 43331
drckgoswami@gmail.com
www.deepfoundation.in

दीप फाउन्डेशन

पुनर्वास केंद्र

परामर्श | थेरेपी | शिक्षा | सशक्तिकरण

हमसे मिलें

293, मानजी का हत्था, पावटा
सनसिटी हॉस्पिटल के पीछे,
जोधपुर राज.

आजादी की तीसरी लड़ाई

भारत की आजादी केवल तलवार और सत्याग्रह से नहीं मिली। साहित्यकारों, कवियों और पत्रकारों ने भी अपनी लेखनी से जनचेतना जगाकर स्वतंत्रता आंदोलन को वैचारिक शक्ति दी। यह उसी अनदेखे मोर्चे की कहानी है।

दिनेश सिंदल,
कवि, लेखक

15 अगस्त 2026 हमारे देश की आजादी की 79वीं वर्षगांठ है। इस आजादी के लिए हमें कई मोर्चों पर लड़ना पड़ा।

पहला सशस्त्र आंदोलन 1857 में बहादुर शाह जफर के नेतृत्व में हुआ। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, मंगल पांडे, नाना साहब, तात्या टोपे, बेगम हजरत महल इत्यादि कई देशभक्तों ने अपने देश की आजादी के लिए अंग्रेजों से जमकर लोहा लिया।

दूसरा आंदोलन गांधी का अहिंसात्मक आंदोलन कहा जा सकता है। अन्याय व अत्याचार के खिलाफ अनशन, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार और स्वदेशी अपनाने की अपील। इस आंदोलन का भी अंग्रेजों पर कुछ प्रभाव पड़ा।

लेकिन इन दोनों के समानांतर एक तीसरा आंदोलन भी चलता रहा। वहां न शस्त्र था, न ही गांधी का चरखा। इस तीसरे मोर्चे पर देश की आजादी के लिए कलम लड़ रही थी। यह कवियों, शायरों व साहित्यकारों का मोर्चा था। यहां शस्त्र नहीं, शास्त्र की शक्ति काम कर रही थी। कविता सामाजिक विसंगतियों पर चोट करती है। शांति के समय वह गीत बनती है और संघर्ष के समय क्रांति का नारा।

सच्चे अर्थों में देश की आजादी के संघर्ष का ऐलान हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं और हिंदी लेखकों की विविध कृतियों से ही हुआ। साहित्यकारों ने देश के लोगों में आजादी की चेतना जगाने का काम अपने कंधों पर लिया। भारतेंदु हरिश्चंद्र जैसे लेखकों ने अपनी रचनाओं से आंदोलन को धार दी। कवियों ने पराधीनता से मुक्त होने का बिगुल बजाया।

जब तक स्वराज हिंद में लाया न जाएगा,
शैतानी हुकूमत को मिटाया न जाएगा।
हर रोज हो रही है तबाही जो हिंद में,
मिट जाएंगे, गर इसको घटाया न जाएगा।

- हरिद्वार प्रसाद

देशभक्त वीरो, मरने से नेक नहीं डरना होगा।
प्राणों का बलिदान देश की वेदी पर करना होगा।

- कवि शंकर

इस काल के सभी साहित्यकारों ने स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग पर लगातार बल दिया।
हमारे हिंद वालों के चलन सारे स्वदेशी हों।
पढ़े सब देश की भाषा, वचन सारे स्वदेशी हों।

- राम कवि

इंसान जिस धरती पर रहता-बसता है, उसके आर्थिक और सांस्कृतिक रिश्तों की जड़ें उस धरती में बहुत गहरी होती हैं और यही वह बंधन है, जो देशभक्ति की भावना की बुनियाद है। मातृभूमि की महिमा का गान भी देशभक्ति का ही अंग है, जिसकी ओर अनेक कवियों ने आग्रहपूर्वक ध्यान दिया।

अजीमुल्ला खान द्वारा संपादित एक छोटे से अखबार पयामे आजादी ने यह घोषणा कर दी कि,

हम हैं इसके मालिक, हिंदुस्तान हमारा।
पाक वतन है कौम का, जन्नत से भी प्यारा।
इसकी सभी प्रतियां अंग्रेजों ने जब्त करके जला दीं।

भारतेंदु हरिश्चंद्र की पत्रिका कविवचन सुधा ने स्वदेशी आंदोलन का बिगुल फूंका। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपनी कविता भारत-दुर्दशा के माध्यम से देश की दुर्दशा को जनता के सामने रखा।

मैथिलीशरण गुप्त ने भारत-भारती के द्वारा देशवासियों में जाति और देश के प्रति गर्व और गौरव की भावनाओं का संचार किया।

मुंशी प्रेमचंद ने अपनी कृति सोजे वतन में अंग्रेजों की खुली खिलाफत की थी। इस पुस्तक को अंग्रेजों ने जब्त कर लिया था।

सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता खूब लड़ी मर्दानी, वह तो झांसी वाली रानी थी तथा भारत के गौरव को परिभाषित करता जयशंकर प्रसाद का करुणालय आदि कई रचनाएं देश में अंग्रेजों की खिलाफत कर रही थीं। रामधारी सिंह दिनकर, माखनलाल चतुर्वेदी, रामनरेश त्रिपाठी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', प्रेमधन, प्रताप नारायण मिश्र, राधाकृष्ण दास आदि अनेक कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से अतीत के प्रेरणादायी प्रसंगों को गाकर नवयुवाओं को पुनर्जागरण का मंत्र दिया। अंग्रेजों ने क्रांति के इन स्वरों को दबाने की कड़ी कोशिशें कीं। कई रचनाओं पर प्रतिबंध लगे। कई रचनाकारों को जेल की सजाएं काटनी पड़ीं। किंतु यह स्वर रुका नहीं। कई रचनाकार छद्म नामों से लिखकर जनजागरण का काम करते रहे। इससे एक जन आंदोलन खड़ा हुआ।

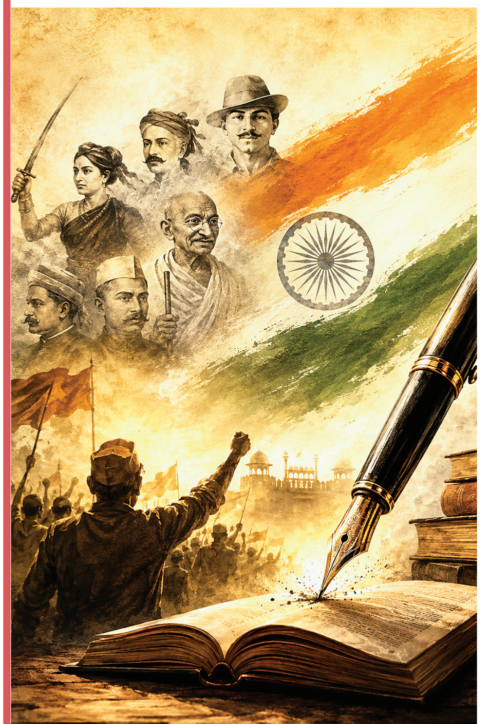

एक सांस्कृतिक एवं वैचारिक आंदोलन

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन केवल एक राजनीतिक संघर्ष नहीं था, बल्कि एक सांस्कृतिक एवं वैचारिक आंदोलन भी था।

आजादी का अर्थ केवल राजनीतिक या भौगोलिक स्वतंत्रता नहीं है, बल्कि व्यक्तिगत, सामाजिक और मानसिक स्वतंत्रता भी है।

आजादी केवल बाहरी गुलामी से मुक्ति नहीं, बल्कि व्यक्ति के विचार, निर्णय और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी है। स्वतंत्रता अर्थात अपने विवेक के अनुसार जीवन जीने की स्थिति, जहां बाहरी दबाव, परतंत्रता और भेदभाव का स्थान न हो।

यह धरती अनेक धर्मों, ज्ञान परंपराओं और कलाओं की जन्मभूमि रही है। इसने वेद, उपनिषद, महाभारत, रामायण, गीता और धम्मपद जैसी पवित्र किताबें दुनिया को दीं। गणित, दशमलव प्रणाली, ज्योतिष और खगोलविद्या में दूसरे देशों का मार्गदर्शन किया।

1947 में हमने राजनीतिक आजादी तो पा ली, लेकिन हम मानसिक और सामाजिक रूप से मुक्त नहीं हो पाए। क्या हमारी भाषा को, हमारी कलाओं को और हमारे संगीत को आजादी मिली?

अगस्त 2026 में मेष, सिंह, तुला, वृश्चिक और कुंभ राशि वालों के लिए अच्छे संकेत अधिक हैं। बाकी राशियों के लिए भी समय बुरा नहीं है, बस धैर्य, संयम और सही निर्णय की जरूरत रहेगी।

विपुल डोभाल, ज्योतिष, पीठाधीश्वर।
श्री शनिधाम आश्रम, विकासनगर देहरादून
ईमेल : vipravaani@gmail.com
मोबाइल : 9928424374

मेष

मेष राशि वालों के लिए अगस्त का महीना ऊर्जा से भरा हुआ रहेगा। कामकाज में तेजी आएगी, और लंबे समय से रुके कामों में हलचल शुरू हो जाएगी। नौकरी करने वालों को नई जिम्मेदारी मिल सकती है, और व्यापार करने वालों के लिए नए अवसर बन सकते हैं। जल्दबाज़ी में बड़ा फैसला मत कीजिए। वाणी में संयम रखेंगे, तो लाभ व सम्मान दोनों मिलेंगे।

वृषभ

वृषभ राशि के जातकों के लिए यह महीना थोड़ा संभलकर चलने का है। धन के मामले में स्थिरता बनी रहेगी, लेकिन अनावश्यक खर्च से बचना होगा। रिश्तों में भी थोड़ी नरमी और धैर्य की आवश्यकता रहेगी। घर-परिवार के मामलों में आपकी भूमिका महत्वपूर्ण बन सकती है। यदि आप दिनचर्या और स्वास्थ्य पर ध्यान देंगे, तो महीना काफी संतुलित निकल जाएगा।

मिथुन

मिथुन राशि वालों के लिए अगस्त का महीना नए संपर्क और नई बातचीत लेकर आ सकता है। जो काम पहले अटक गए थे, उनमें अब गति आने लगेगी। नौकरी में अपनी बात रखने का अच्छा अवसर मिलेगा, और व्यापार में नेटवर्किंग से फायदा हो सकता है। लेकिन हर बात पर तुरंत भरोसा करना ठीक नहीं होगा। समझदारी से लिया गया निर्णय आपको आगे बढ़ाएगा।

कर्क

कर्क राशि के लिए यह महीना भावनाओं और परिवार के बीच संतुलन बनाने का है। घर के मामलों में आपकी भूमिका बढ़ सकती है। मन थोड़ा जल्दी विचलित हो सकता है, इसलिए धैर्य बनाए रखना बहुत जरूरी रहेगा। कामकाज में धीरे-धीरे प्रगति होगी, लेकिन सही दिशा में होगी। अगर आप मन को शांत रखेंगे, तो महीने के अंत तक राहत महसूस करेंगे।

सिंह

सिंह राशि वालों के लिए अगस्त बहुत ही शुभ संकेत लेकर आ सकता है। आत्मविश्वास बढ़ेगा, काम में पकड़ मजबूत होगी, और लोगों के बीच आपकी छवि बेहतर बनेगी। नौकरी और व्यापार दोनों में अच्छे परिणाम मिल सकते हैं। मान-सम्मान, पहचान और सफलता के योग बन रहे हैं। यह समय आपके लिए आगे बढ़ने का है, बस अहंकार से बचकर रहना होगा।

कन्या

कन्या राशि के जातकों के लिए यह महीना अनुशासन और योजना का है। आपकी मेहनत रंग ला सकती है, लेकिन छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देना जरूरी होगा। काम में किसी तरह की लापरवाही नुकसान पहुंचा सकती है। स्वास्थ्य और मानसिक थकान पर भी थोड़ा ध्यान देना होगा। जो लोग व्यवस्थित तरीके से चलेंगे, उन्हें अच्छा फल मिलेगा।

तुला

तुला राशि वालों के लिए अगस्त का महीना संतुलन और समझदारी का रहेगा। घर-परिवार में अच्छा माहौल बन सकता है। नौकरी या सेवा क्षेत्र से जुड़े लोगों को सहयोग मिलने के संकेत हैं। अगर आप कला, संवाद या लोगों से जुड़े काम में हैं, तो यह महीना आपके लिए अनुकूल रह सकता है। रिश्तों में विनम्रता बनाए रखेंगे, तो बातें बहुत सहज होंगी।

वृश्चिक

वृश्चिक राशि वालों के लिए यह महीना गहराई और प्रगति दोनों लेकर आ सकता है। जो काम लंबे समय से रुके हुए थे, वे अब आगे बढ़ने लगेंगे। रिश्तों में मजबूती आएगी और किसी करीबी का सहयोग आपको मानसिक शांति देगा। करियर में भी आपके प्रयासों की पहचान हो सकती है। यह महीना धीरे-धीरे, लेकिन मजबूत परिणाम देने वाला बन सकता है।

धनु

धनु राशि के जातकों को इस महीने उत्साह तो रहेगा, लेकिन साथ में अनुशासन भी बनाए रखना होगा। खर्चों पर ध्यान देना जरूरी रहेगा। अगर आप योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ेंगे, तो अच्छा लाभ मिल सकता है। काम का फल थोड़ी देरी से दिख सकता है, इसलिए धैर्य न छोड़ें। लंबी अवधि की सोच इस महीने बहुत काम आएगी।

मकर

मकर राशि वालों के लिए अगस्त का महीना स्थिरता और धैर्य का संदेश लेकर आएगा। करियर में धीरे-धीरे प्रगति होगी, लेकिन वह मजबूत आधार तैयार करेगी। आर्थिक मामलों में संयम रखना जरूरी रहेगा। परिवार और काम के बीच संतुलन बनाए रखना होगा। जो लोग लंबे लक्ष्य पर ध्यान देंगे, उनके लिए यह महीना उपयोगी साबित हो सकता है।

कुंभ

कुंभ राशि के लिए यह महीना काफी महत्वपूर्ण रह सकता है। अटके हुए काम आगे बढ़ेंगे और सहयोग मिलने के योग बनेंगे। धन के मामले में सुधार संभव है, लेकिन बचत पर ध्यान देना जरूरी रहेगा। रिश्तों में साफ़-साफ़ और सीधे संवाद से फायदे होंगे। यह महीना आपकी मेहनत का परिणाम दिखाने वाला हो सकता है।

मीन

मीन राशि वालों के लिए अगस्त का महीना नई शुरुआत और मानसिक राहत का समय हो सकता है। करियर और निजी जीवन में सकारात्मक बदलाव आने के संकेत हैं। अगर आप कोई नया काम शुरू करना चाहते हैं, तो समय अनुकूल रह सकता है। भावनाओं में बहकर निर्णय लेना सही नहीं होगा। शांत मन और साफ सोच से आप अच्छा परिणाम हासिल करेंगे।

राजस्थान ग्रामीण बैंक
RAJASTHAN GRAMIN BANK
(सरकार के स्वामित्वाधीन अनुसूचित बैंक)

आरजीबी पीएम विद्यालक्ष्मी योजना

भारत के गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षण संस्थानों (QHEI) के लिए शिक्षा ऋण*

आकर्षक ब्याज दर • अधिकतम सहयोग • उज्ज्वल भविष्य की शुरुआत

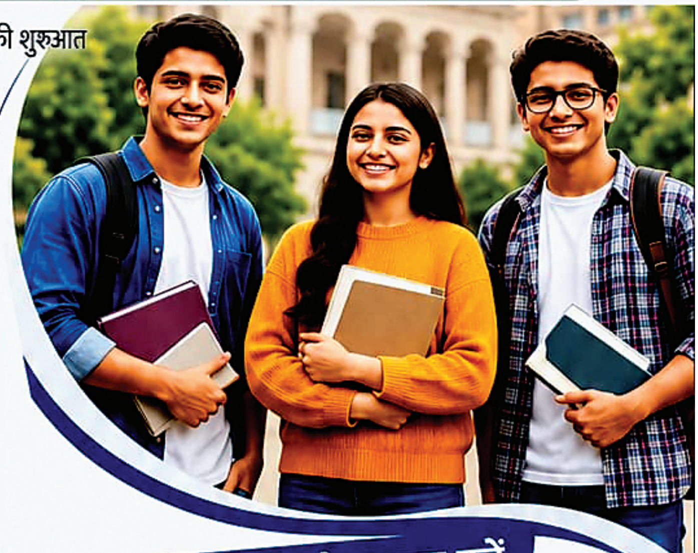

ऋण की प्रमुख विशेषताएँ

लक्षित संस्थान	भारत के गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षण संस्थानों (QHEI) में अध्ययन हेतु शिक्षा ऋण योजना
ऋण राशि	संस्थान द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम शुल्क एवं अन्य संबंधित शुल्क के अनुसार।
ब्याज दर (फ्लोटिंग ROI)	केवल 7.50%* से प्रारंभ
सिक्योरिटी एवं गारंटर	सिक्योरिटी-मुक्त एवं गारंटर-मुक्त शिक्षा ऋण
मार्जिन	शून्य (Nil*)
प्रोसेसिंग शुल्क	शून्य (Nil)
पूर्व भुगतान शुल्क	शून्य (Nil)
पुनर्भुगतान अवकाश (मोरेटोरियम)	पाठ्यक्रम अवधि + 1 वर्ष
पुनर्भुगतान अवधि	मोरेटोरियम अवधि को छोड़कर अधिकतम 15 वर्ष।
ब्याज में रियायत*	• छात्राओं के लिए 0.50% की अतिरिक्त छूट • मोरेटोरियम अवधि के दौरान ब्याज भुगतान करने पर 0.50% की अतिरिक्त छूट
ऋण में शामिल व्यय	कॉलेज शुल्क, हॉस्टल शुल्क, परीक्षा शुल्क, बीमा प्रीमियम एवं अन्य पाठ्यक्रम संबंधी व्यय।

अपने सपनों को साकार करें
आपकी शिक्षा यात्रा में हम आपके साथ हैं!

100% ब्याज अनुदान*
वार्षिक पारिवारिक आय ₹4.50 लाख तक के पात्र विद्यार्थियों को ₹10 लाख तक के शिक्षा ऋण पर 100% ब्याज सब्सिडी!

3% ब्याज अनुदान
₹8 लाख तक की वार्षिक पारिवारिक आय वाले पात्र विद्यार्थियों को ₹10 लाख तक के शिक्षा ऋण पर 3% ब्याज सब्सिडी!

आकर्षक ब्याज दर | प्रतिभूति-मुक्त एवं गारंटर-मुक्त ऋण | सरल एवं त्वरित प्रक्रिया | शिक्षा के प्रत्येक चरण में आपका विश्वसनीय साथी

समझदार बनिये, आरजीबी चुनिये!

0291 - 2593100
www.rgb.bank.in

* नियम व शर्तें लागू

एक ही छत के नीचे नि:शुल्क ईलाज-ऑपरेशन

हृदय रोग
- एन्जियोप्लास्टी
- एन्जियोग्राफी
- बाईपास सर्जरी
- वाल्व सर्जरी
- पेसमेकर

हड्डी रोग
- घुटना-कूल्हा प्रत्यारोपण
- जोड़ प्रत्यारोपण

गुर्दा एवं मूत्र रोग
- पथरी, प्रोस्टेट
- दूरबीन एवं लेजर ऑपरेशन
- अन्य गुर्दा व मूत्र रोग के ईलाज व ऑपरेशन

पेट व लिवर रोग
- विडियो गेस्ट्रोस्कॉपी
- विडियो कॉलोनोस्कॉपी
- ERCP
- बैन्डिग एवं लिगेशन

स्त्री व शिशु रोग
- सामान्य व मुश्किल प्रसव
- दूरबीन द्वारा स्त्री बच्चेदानी के ऑपरेशन उपलब्ध
- नवजात शिशु उपचार
- शिशु शल्य चिकित्सा

शल्य चिकित्सा
- दूरबीन द्वारा पेट, आंतों, बच्चेदानी के ऑपरेशन
- पाईल्स, हर्निया, हाइड्रोसिल व अन्य ऑपरेशन

मस्तिष्क रोग
- न्यूरोसर्जरी एवं कमर के ऑपरेशन दूरबीन से उपलब्ध
- दिमाग एवं रीढ़ की हड्डी की सर्जरी

कान नाक गला
- कान रोग व ऑपरेशन
- नाक रोग दूरबीन द्वारा ऑपरेशन
- गला रोग, थायराईड, टॉन्सिल, कैन्सर रोग,

दन्त एवं नैत्र रोग
- डेंटल कैप
- एक्सट्रैक्शन
- डेंटल रुट कैनाल
- डेंटल फिलिंग
- नेत्र रोग
- केट्रेक्ट (मोतियाबिंद)

चर्म रोग
सेवाओं में विस्तार
प्रतिदिन
सुबह 10:00 बजे से 2:00 बजे तक

प्लास्टिक, कॉस्मेटिक एवं रिकन्सट्रक्टीव माइक्रोसर्जरी विभाग
कटे-फटे होंठ और तालु के नि:शुल्क ऑपरेशन

MRI
CT Scan
(24X7)
ICU, ICCU, NICU, PICU
सुविधा उपलब्ध

RGHS
राज्य सरकार के कर्मचारियों, पेंशनर्स एवं उनके आश्रितो के लिए

RGHS
लाभार्थियों के लिए
नि:शुल्क
OPD परामर्श, दवाईयां, ऑपरेशन व जाँचे
24x7 आपातकालीन सेवा

मुख्यमंत्री आयुष्मान आरोग्य योजना
MAA-YOJANA

कैंसर का ईलाज, हम हैं आपके साथ...

कैंसर PET CT SCAN प्रतिदिन उपलब्ध

कैंसर रेडियोथेरेपी (सिकाई) प्रतिदिन उपलब्ध

कैंसर सर्जरी एवं दूरबीन ऑपरेशन

कैंसर कीमोथेरेपी कैंसर इम्युनोथेरेपी

CT Guided Biopsy/ FNAC IHC Mammography

गोयल हॉस्पीटल
रेजीडेंसी रोड़, जोधपुर (राज.)
www.goyalhospital.org

एस के जी कैंसर हॉस्पीटल
झालामण्ड, जोधपुर (झालामण्ड चौराहे से सिर्फ 3 कि.मी. दूरी पर)
www.skgcancerhospital.com

अधिक जानकारी हेतु संपर्क करें - 7412025320, 8769707913